CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

धर्मदूत

महाबोधि सभा सारनाथ का मासिक मुखपत्र

मई–जून.
वर्ष २६
अंक १–२

वार्षिक ५)
इस अंक का
१।)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ
१. बुद्ध-वचनामृत—'संसार में तीन बातें अटल हैं'	...	१
२. बौद्धधर्म और दर्शन—भदन्त शासनश्री महास्थविर	...	२
३. बुद्ध-अभिनन्दन (कविता)—सुश्री विद्यावती 'मालविका'	...	४
४. बौद्धधर्म निराशावादी धर्म नहीं—श्री सोहनलाल शास्त्री	...	५
५. समाधि-भावना—श्री सत्यगवेषी	...	८
६. बौद्धधर्म का वास्तविक स्वरूप—श्री सन्तराम	...	१२
७. स्थविरवाद में निर्वाण—श्री महेश तिवारी	...	१४
८. निर्वाण (कविता)—श्री विश्वनाथ वाजपेयी	...	१७
९. भगवान् बुद्ध—श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'	...	१८
१०. शुश्रूषक बुद्ध (कविता)—श्री बसन्तकुमार शाक्य	...	२१
११. नालन्दा में स्वसर्पण अवलोकितेश्वर का मन्दिर—डा० चन्द्रिका सिंह उपासक	...	२२
१२. शान्ति और एकता का मार्ग—श्री उपेन्द्रनाथ राय	...	२५
१३. बोधिसत्त्व (कविता)—श्री भीमराव लोन्हारकर	...	२८
१४. भगवान् बुद्ध की शिक्षा और मानसिक चिकित्सा—श्री लालजीराम शुक्ल	...	२९
१५. वास्तविक मंगल क्या है—श्री अनन्तरामचन्द्र कुलकर्णी	...	३२
१६. रक्त का मूल्य (कविता)—श्री जयराम सिंह	...	३५
१७. विन्ध्य प्रदेश के बौद्धनष्टावशेष—श्री भय्यालाल प्रजापति	...	३५
१८. भरहुत की शिल्पकला—श्री गंगासिंह बिरोरिया	...	३८
१९. चिरन्तन सन्देश—श्री सुमन वात्स्यायन	...	४२
२०. बौद्ध-जगत्	...	५०

'धर्मदूत' के नियम--

१—"धर्मदूत" भारतीय महाबोधि सभा का हिन्दी मासिक मुखपत्र है। "धर्मदूत" प्रति पूर्णिमा को प्रकाशित होता है।

२—"धर्मदूत" के ग्राहक किसी भी मास से बनाये जा सकेंगे।

३—पत्र-व्यवहार करते समय ग्राहक-संख्या एवं पूरा पता लिखना चाहिये, ताकि पत्रिका के पहुँचने में गड़बड़ी न हो।

४—लेख, कविता, समालोचनार्थ पुस्तकें (दो प्रतियाँ) और बदले के पत्र सम्पादक के नाम तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र और चन्दा व्यवस्थापक के नाम पर भेजना चाहिये।

५—किसी लेख अथवा कविता के प्रकाशित करने या न करने, घटाने-बढ़ाने या संशोधन करने का अधिकार सम्पादक को है। बिना डाकखर्च भेजे अप्रकाशित कविता या लेख लौटाये न जा सकेंगे। जिस अङ्क में जिनका लेख या कविता छपेगी वह अङ्क उनके पास भेज दिया जायगा।

६—"धर्मदूत" में केवल बौद्धधर्म, कला, संस्कृति, साहित्य, पुरातत्व आदि सम्बन्धी लेख ही प्रकाशित किये जा सकेंगे।

७—किसी लेखक द्वारा प्रकटित मत के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

८—"धर्मदूत" का वार्षिक मूल्य ५) और आजीवन १००) है।

व्यवस्थापक

"धर्मदूत" सारनाथ, वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

[कुशीनगर-स्थित भगवान् बुद्ध की एक भव्य प्रतिमा]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

धर्मदूत

चरथ भिक्खवे चारिकं वहुजनहिताय वहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। देसेथ भिक्खवे धम्मं आदिकल्याणं मज्झे कल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सव्यञ्जनं केवल परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेथ। महावग्ग (विनय-पिटक)

'भिक्षुओ! बहुजन के हित के लिये, बहुजन के सुख के लिये, लोक पर दया करने के लिये, देवताओं और मनुष्यों के प्रयोजज के लिये, हित के लिये, सुख के लिये विचरण करो। भिक्षुओ! आरम्भ, मध्य और अन्त—सभी अवस्था में कल्याणकारक धर्म का उसके शब्दों और भावों सहित उपदेश करके, सर्वांश में परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य का प्रकाश करो।'

सम्पादकः—त्रिपिटकाचार्य भिक्षु धर्मरक्षित, एम० ए०

वर्ष २६ | सारनाथ, मई-जून | बु० सं० २५०५ / ई० सं० १९६१ | अङ्क १-२

बुद्ध-वचनामृत

'संसार में तीन बातें अटल हैं'

'भिक्षुओ! चाहे तथागत उत्पन्न हों या न हों किन्तु यह धर्म-स्थिति, यह धर्म-नियम यों ही रहता है—सभी संस्कार अनित्य हैं। इस नियम को तथागत जान जाते हैं, ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। जानकर, ज्ञान प्राप्त करके कहते हैं, उपदेश देते हैं, प्रज्ञापित करते हैं, स्थापित करते हैं, उघाड़ते हैं, व्याख्या करते हैं, प्रकट करते हैं कि सभी संस्कार अनित्य हैं। ऐसे ही भिक्षुओ! चाहे तथागत उत्पन्न हों या न हों किन्तु यह धर्म-स्थिति, यह धर्म-नियम यों ही रहता है—सभी संस्कार दुःख हैं, सभी धर्म अनात्म हैं।

'सभी संस्कार अनित्य हैं', 'सभी संस्कार दुःख हैं', 'सभी धर्म अनात्म हैं'—ऐसा जब प्रज्ञा से देखता है तब सभी दुःखों से निर्वेद को प्राप्त होता है, यही विशुद्धि का मार्ग है।'

—अंगुत्तरनिकाय १३४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बौद्धधर्म और दर्शन

भदन्त शासनश्री महास्थविर

भगवान् बुद्ध द्वारा उपदिष्ट धर्म, केवल धर्म ही है या वह कोई दर्शन भी है—इस विषय में बहुत मतभेद है। कुछ लोगों का कहना है कि वह केवल धर्म है, दर्शन नहीं। कुछ लोग कहते हैं कि वह एक आचार-विधि है। यद्यपि विश्व के अधिकांश लोग यह कहते हैं कि बौद्ध-धर्म केवल दर्शन मात्रः ही नहीं, प्रत्युत वह एक अति विशिष्ट विवेचनात्मक दर्शन है। इस तथ्य पर विचार करने से पूर्व हमें यह समझ लेना आवश्यक है कि दर्शन किसे कहते हैं ?

ग्रीक-दार्शनिकों में प्लेटो का नाम प्रमुख है। प्लेटो का कथन है कि जो सर्वकाल एवं सर्वभाव को जानता है, वह दार्शनिक है। इससे दर्शन के लक्षण ज्ञात होते हैं। संसार की सारी वस्तुएँ दार्शनिक-दृष्टि में दृष्टिगोचर होनी चाहिये। अतः बुद्धि-पूर्वक ज्ञान को हम दर्शन कह सकते हैं। यह तर्क-संगत होना चाहिए। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि संसार में सब-कुछ एक ही न्याय के अनुसार होता है। तात्पर्य दिशा, काल, वस्तु, जीव आदि सब कुछ दर्शन के विषय हैं। इससे प्रकट होता है कि सभी तत्त्व इसके अन्तर्गत हैं। इस प्रकार विचार-विमर्श करने पर संसार की सब वस्तुएँ एवं सब कार्य भी दर्शन-ज्ञान को गोचर होते हैं। दर्शन का अवबोध होना दुष्कर कार्य है, क्योंकि दर्शन-ज्ञान से जिसे जान लिया जाता है, उसके विषय में जानने की बहुत बातें होती हैं।

श्यामदेशीय एक बुद्धमूर्ति

इससे हमें जानना चाहिये कि बौद्धधर्म भी बुद्धिगम्य ज्ञानमूलक मार्ग है। तथापि बौद्धधर्म के अनुसार ज्ञेय और दर्शन विषयक वस्तुओं में बहुत अन्तर है। प्रत्येक तत्त्व दर्शन का भी विषय होने के कारण भौतिक विद्या को गोचर होनेवाली लौकिक वस्तु भी, जीव विद्या को गोचर होनेवाली वस्तुएँ भी तथा भू-विद्या को गोचर होने वाली जगत्-परिणामादि वस्तुएँ भी सब विषयों से सम्बन्धित होनेवाली सब चिन्ताएँ दर्शन के विषय होती हैं। किन्तु सारी लोक-चिन्ता निष्प्रयोजन चिन्ता हो जाती है। ऐसी बौद्धधर्म की शिक्षा है। संयुत्तनिकाय-में सच्चसंयुत्त के पपातवग्ग में भगवान् बुद्धने ऐसी चिन्ताओं की गुलामी से उत्पन्न व्यक्ति की अवस्था का वर्णन किया है। उन्होंने कहा है—'भिक्षुओ ! ऐसी लोक चिन्ता नहीं करनी चाहिये। जैसे कि यह लोक शाश्वत है या अशाश्वत ? लोक सान्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है या अनन्त ? जीव और शरीर एक ही है या भिन्न-भिन्न ? तथागत मरने के बाद होते हैं या नहीं ? ऐसी चिन्ताएँ सार्थक नहीं हैं। ये न तो ब्रह्मचर्य-पालन के लिए, न निर्वेद, विराग, निरोध, उपशम, अभिज्ञा, सम्बोधि और निर्वाण के लिए ही हैं। भिक्षुओ ! इस प्रकार की चिन्ताएँ सार्थक होती हैं—यह दुःख है, यह दुःख का मूल कारण है, यह दुःख का निरोध है और यह दुःख के निरोध का मार्ग है।"

भगवान् बुद्ध की इसी देशना से बौद्धधर्म और दर्शन में क्या अन्तर है—इसे प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं। बौद्धधर्म के अनुसार दुःख सम्बन्धी यथार्थता का विचार-विमर्श करने के समय मनुष्य बुद्धि का उपयोगी होना आवश्यक है। इसलिए लौकिक ज्ञान प्राप्त करने का मार्ग दर्शन और बौद्धधर्म में एक ही होता है। तथापि विषय के कारण इन दोनों में भेद है। बुद्धधर्म के अनुसार निर्वाण को पानेवाले दुःख आदि आर्यसत्य बुद्धि के विषय होने चाहिए। इसकी चिन्ता लौकिक रूप से कभी-कभी आवश्यक होने पर भी नियत रूप से निष्प्रयोजन होती है। अन्य क्रम से भी बौद्धधर्म और दर्शन में विभिन्नता दिखाई देती है। केवल बुद्धिजन्य होने मात्र से ही आध्यात्मिक ज्ञान का प्राप्त करना असम्भव है। इसलिए लौकिक ध्यान विदर्शनादि विषय सम्बन्धी वस्तुओं का बुद्धिगोचर होना इस धर्म के अनुसार निस्सार काम है। इस कारण भगवान् बुद्ध की देशना उपदिष्ट शिक्षा से स्पष्ट हो जाती है। अंगुत्तर निकाय में चतुक्क निपात के अपण्णक वग्ग में तथागत ने कहा है—"भिक्षुओ ! ये चार बातें अचिन्तनीय हैं। इनकी चिन्ता पागल बनानेवाली तथा कष्टदायी हैं। कौन-सी चार ? बुद्धों का बुद्ध-विषय अचिन्त्य है। कर्म-विपाक होने का क्रम अचिन्त्य है। लोक-चिन्ता भी अचिन्त्य है।"

आधुनिक जगत् में दार्शनिक लोग ऐसी वस्तु को दार्शनिक विषय मानकर केवल बुद्धि से ही समाधान पाने का प्रयत्न करेंगे तो यह बुद्धिमानी न होगी। लोकोत्तर तत्व तो केवल विदर्शना ज्ञान का विषय है। वह मनुष्य का साधारण बुद्धि से ऊपर विशेष प्रज्ञा की वस्तु है। दार्शनिक चिन्तन से इसे नहीं पाया जा सकता। इसे चित्त की पारिशुद्धि से ही पाया जा सकता है। चित्तपारिशुद्धि से प्रज्ञापारिशुद्धि होती है। इसे दिखलाना बौद्धधर्म की विशिष्ट शिक्षा है। दर्शन में ऐसी कोई आवश्यकता नहीं होती है—इसे हम सरलता पूर्वक समझ सकते हैं।

जिन्हें त्रिपिटक का पूर्ण ज्ञान नहीं है, वे ही बुद्धधर्म सम्बन्धी अनेक बातें करते हैं। सुत्तपिटक से उन्हें ऐसा लगता है कि यह केवल धर्म ही है और विनयपिटक से आचार-विधि, किन्तु अभिधर्मपिटक से केवल दर्शन जान पड़ता है। वास्तव में तीनों का सम्यक् विचार करने पर स्पष्ट जान पड़ता है कि बौद्धधर्म धर्म होने के साथ ही साथ एक विशिष्ट दर्शन है और ऐसा दर्शन है कि जिसकी तुलना किसी अन्य धर्म या दर्शन से कर सकना सम्भव नहीं। यह संसार के दर्शन-जगत् में अद्वितीय एवं प्रधान है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बुद्ध-अभिनन्दन

आज उन्हें शत-शत वन्दन है।
जिन चरणों से पूत हुई मध्यदेश की भूमि श्यामला।
जगी अहिंसा ज्योति जगत् में विकसी अभिनव बौद्ध कला॥
मानव उर में नई चेतना नये राग का सृजन हुआ।
समता मैत्री दया धर्म का उदय कलुष का दमन हुआ॥
उन्हीं तथागत की स्मृति में खोया मेरा तन मन है।
आज उन्हें शत-शत वन्दन है॥

जगा लुम्बिनी कानन जागी उरुवेला की वन्य धरा।
ऋषिपत्तन का अहोभाग्य सब जाग उठी री वसुन्धरा॥
चले भिक्षु ले अमृतघट को मानवता का रूप चला।
तृषित जनों की प्यास बुझी औ जग में नया प्रदीप जला॥
उन परम शास्ता के चरणों में मेरा सदा नमन है।
आज उन्हें शत-शत वन्दन है॥

सारनाथ नालन्दा सांची तक्षशिला के भग्न विहार।
बाघ अजन्ता एलौरा औ' कुशीनगर के जीर्ण द्वार॥
लंका बर्मा श्याम मलाया हिमप्रदेश के अनुगामी।
सभी बोलते नतमस्तक हो बुद्धं सरणं गच्छामी॥
उन्हीं बुद्ध का भाव-कुसुम से मेरा अभिनन्दन है।
आज उन्हें शत-शत वन्दन है॥

सुश्री विद्यावती "मालविका", एम० ए०, साहित्यरत्न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बौद्धधर्म निराशावादी धर्म नहीं

श्री सोहनलाल शास्त्री, विद्यावाचस्पति, बी० ए०

मानव विचारों का पुतला है, इसे जिस प्रकार के विचारों की पुट दी जाती है या शिक्षा मिलती है यह उसी साँचे में ढल जाता है। जरायमपेशा के लोगों के बच्चे प्रायः जरायमपेशा वाले देखे जाते हैं। जिन परिवारों का भूत-प्रेत, डाकिनी, चुड़ैल आदि बातों में विश्वास है और वे इन भूतों आदि की कहानियाँ अपने कोमल हृदय की सन्तानों को सुनाते हैं, परिणामतः उन सन्तानों के मस्तिष्क में भी भूत-प्रेत का वहम घुस जाता है और वे आजीवन इन्हीं वहमों के शिकार हो जाते हैं। अफगानिस्तान के बच्चों में उनके माँ-बाप वीरता की भावनाएँ बाल्यकाल से ही भर देते हैं। इन्हीं विचारों का प्रभाव है कि पठान सदैव निर्भीक और लड़ाकू रहा है। जिस प्रकार साधारण व्यावहारिक जगत् में विचारों का प्रभाव शाश्वत सत्य है, उसी प्रकार भिन्न-भिन्न धर्मों और संस्कृतियों ने अपने इर्द-गिर्द चारों ओर अपने अनुयायियों के हृदयों में विचार धर्म, तत्व अथवा धर्मदर्शन के सिद्धांतों के बीज बो दिये हैं उनके जीवन में वही फलीभूत हुये हैं। इस्लाम धर्म ने गैर मुस्लिमों के साथ जैसा बर्ताव करने की शिक्षा दी, प्रत्येक मुस्लिम के रक्त में उस शिक्षा का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। हिन्दुओं को उनकी स्मृतियों और अन्य धर्म ग्रन्थों में जिस चातुर्वर्ण की व्यवस्था में बने रहने और चालू रखने की सीख दी गई है, प्रत्येक हिन्दू उसी साँचे की ढलाई का नमूना कहा जा सकता है। इन धर्म सिद्धांतों का प्रभाव क्रमशः उनके अनुयायियों पर केवल उनकी सामाजिक मनोवृत्ति गढ़ने में ही नहीं पड़ा वरन् जीवन के तुच्छ-से-तुच्छ पहलू से लेकर आध्यात्मिक वाद के गम्भीर से गम्भीर स्वरूप-रचना में भी इन विचारों के प्रभाव सहज में ही दृष्टिगोचर हो जाते हैं। हमें प्रस्तुत लेख में इस अयथार्थ और असत्य प्रचार का कि "बौद्ध संस्कृति निराशावाद और पलायनवाद या निष्क्रियता की प्रतीक है", खण्डन करना अभीष्ट है। भगवान् बुद्ध ने जिन मन्तव्यों और सिद्धातों का प्रचार किया और जिन नियमों को मानव जीवनमें कार्यान्वित करने के लिए उन्होंने अपनी आयु के ४५ वर्ष व्यतीत किये और उनके पश्चात् बौद्ध संघ ने जिस धर्मचक्र को कई शताब्दियों तक ढीला नहीं पड़ने दिया, क्या वस्तुतः इन उपदेशों का सार मानव

जन्म-ग्रहण करने के लिए बोधिसत्व से देवों की प्रार्थना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

को निष्क्रिय और निराशावादी ही बनाना था। हमारा विश्वास ही नहीं यह दावा है कि भगवान् बुद्ध ने मानव को जितनी क्रियाशीलता तथा जीवन को सफल तथा उच्च बनाने की स्फूर्ति और आशा प्रदान की है, किसी भी अन्य धर्म-प्रवर्त्तक ने ऐसा नहीं किया। ३५ वर्ष की आयु से तथा उससे पूर्व भी छः वर्ष की साधना, तपस्या के जीवन से लेकर निरन्तर ८० वर्ष की आयु तक भारत के स्थान-स्थान पर भ्रमण करते रहना और रुग्णावस्था में आनन्द के साथ धर्मदान देकर मानव-कल्याण करने के लिए कुसीनारा के अरण्य में महापरिनिर्वाण प्राप्त करनेवाले अमिताभ को निष्क्रियता का प्रचारक कहना सफेद झूठ नहीं तो और क्या है? अपने शिष्यों को यही उपदेश देना कि सुख और आलस्य का जीवन त्याग कर डगर-डगर घूमों, किसलिए "बहुजन हिताय बहुजन सुखाय"। भारत भूमि के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक, नहीं नहीं, एशिया महाद्वीप भर में इंच-इंच भर भूमि में बौद्ध संस्कृति और सभ्यता की छाप की साक्षियाँ पुकार-पुकार कर सिद्ध कर रही हैं कि बौद्धचक्र का प्रवर्त्तक आलसी और निष्क्रिय नहीं था।

बाघ, एलौरा तथा अजन्ता की गुफाएँ, तक्षशिला, नालन्दा, नागार्जुनी कोण्डा के खण्डहर पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि बौद्धधर्म अत्यन्त क्रियाशील धर्मतत्व का प्रचारक है। आज से हजारों वर्ष पहले जब बीहड़ और भयानक जङ्गलों में एक मील भर की यात्रा करना भी असम्भव-सा था, बौद्धधर्म प्रचार के लिए निर्गम हिमालय को साधारण नदी-नाले की भांति फाँद करके चीन, कोरिया, मंगोलिया में त्रिशरण और अष्टशील के बौद्ध प्रचारकों का पहुँच जाना ऐसे झूठे और गुमराह लोगों की आँखें खोलने के लिए क्या अकाव्य सबूत नहीं कि भगवान् बुद्ध का धर्म श्रम तथा भय पर विजय पानेवाला अत्यन्त आशापूर्ण सन्देश था। काबुल, कन्धार, ईराक, ईरान तथा बाकू तक धर्म-दौड़ लगानेवाले सद्प्रचारकों को जी-जान पर खेल ऐसी दुर्गम, दुःसह और कष्टमय यात्राएँ करते थे, सुस्त या आलसी धर्म के धर्मदूत कहने वालों को स्वयं लज्जा आनी चाहिए। केवल पर्वतों और जलती रेत के मैदानों को ही पार करके भिक्षु शांत तथा सन्तुष्ट नहीं हो गये, समुद्र के साथ भी मुकाबला करने पर कटिबद्ध रहे और लंका, बर्मा, स्याम आदि देशों में तथागत की धर्म-ज्योति को जा चमकाया। भले ही ऐसी समुद्र यात्राओं में सौ भिक्षुओं में नब्बे को समुद्र की ही भेंट क्यों न होना पड़ा हो। बौद्ध महाराजा अशोक यदि आलस्य और निराशावाद फैलानेवाले धर्म का उपासक होता तो भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक सड़कें क्यों बनवाता, और ऐसी सड़कों के दोनों ओर वृक्ष, मील-मील पर ठण्डे पानी के प्याऊ, अस्पताल और पशु आतुरालय कैसे बना सकता था? इस प्रकार की क्रियाशीलता और पुण्य भावना की प्रेरणा तो उसे अवश्य भगवान् बुद्ध के धर्म सिद्धान्तों से ही मिली होगी। रामायण और महाभारत के हीरो (नायक) श्रीराम और श्रीकृष्ण ने स्वयं अपने राज्यों में कभी ऐसा पुण्यात्मक काम नहीं किया, फिर उनके उपासक राजाओं से क्या आशा हो सकती है?

भगवान् बुद्ध के उपासकों ने वास्तुकला, ललितकला, काव्यकला, आयुर्वेद और दर्शन के क्षेत्र में ऐसी क्रियाशीलता दिखाई है, जिसकी मिसाल वे स्वयं हैं। अश्वघोष का काव्य ही कालिदास के लिए प्रेरणादायक था। यदि वह अश्वघोष (बुद्ध चरित) को न पढ़ता तो महाकवि की उपाधि न पा सकता। बौद्ध वैद्यों में जीवक का नाम भुलाए नहीं भूल सकता। आयुर्वेद में भिक्षु वैद्य इतने निष्णात थे कि छेद्य, भेद्य (जर्राही) कला में भी शिखर पर पहुँचे थे। भगन्दर फोड़े का आप्रेशन जो आज तक ला इलाज (असाध्य) माना जाता है, आज से सहस्रों वर्ष पूर्व बौद्ध वैद्य इसका सफल आप्रेशन करते थे। कटी नाक की प्लास्टिक सर्जरी करने का श्रेय भी बौद्ध भिक्षुओं ने ही प्राप्त किया है। अनेक आयुर्वेद ग्रन्थों की रचना की, व्याकरण, काव्य, गद्य, पद्य में कमाल कर दिखाया। आज हिन्दू जिस वेदांत दर्शन पर घमण्ड करते हैं, यह भी तो बौद्ध पण्डित नागार्जुन की ही देन है।

जीवन का कोई भी ऐसा पहलू नहीं, भले ही वह सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक हो, प्रत्येक पर बौद्ध की अमिट मुहर लगी हुई है, रवीन्द्र नाथ टैगोर को जब "गीतांजलि", काव्य पर नोबुल प्राइज मिला तो आप ने अपने मित्रों से कहा कि इससे ऊँचा काव्य तो एक बौद्ध भिक्षु ने मुझे कुछ दिन पहले सुनाया था। वास्तव में इस पारितोषिक का वही अधिकारी है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बौद्ध धर्म की स्फूर्ति केवल भारतीय उपासकों और भिक्षुओं के हिस्से में ही नहीं आई, फाहियान और ह्यून सांग के अदम्य उत्साह कुछ कम हैं, जो गोबी का रेगिस्तान पार करके हजारों मील यात्रा करके भगवान् बुद्ध की जन्म तथा कर्मभूमि भारत की यात्रा के लिए यहाँ पहुँचे। अनेक वर्षों तक यहाँ जगह-जगह घूमकर बौद्ध वाङ्मय को एकत्र करके अपनी पीठ पर लादे वापस चीन में पहुँचे। कौन-सी ऐसी अद्भुत प्रेरणा थी जिसने इन बौद्ध यात्रियों को इतने कष्ट झेलने पर मजबूर किया। क्या इसे हम बौद्ध धर्म की स्फूर्ति, कर्मण्यता और आशा-वाद का नाम नहीं दे सकते। अभी नामालूम बौद्धों के इतिहास के लिए इस भूखण्ड तथा एशिया के अन्य बौद्ध देशों में कितनी ऐसी सामग्री बिखरी पड़ी अथवा भूतल के नीचे छिपी पड़ी है, जो उच्च स्वर से पुकारेगी कि बौद्ध धर्म संसार की क्रियाशीलता तथा ओजस्विता का ऐसा उदाहरण है जिसे कोई भी अन्य धर्म या संस्कृति चुनौती नहीं दे सकती।

भगवान् बुद्ध के चार "आर्यसत्य" अर्थात् दुःख, दुःख का कारण, दुःख निवारण और उसका उपाय भी संकीर्ण हृदय आलोचकों की विषय वस्तु है। इसमें रत्ती भर भी सन्देह नहीं कि संसार में दुःख है। जन्म से लेकर मरण पर्यन्त प्रत्येक प्राणी के चारों ओर दुःख के मेघ छाये रहते हैं। किन्तु भगवान् बुद्ध उस दुःख से पलायनवाद नहीं सिखलाते। पंचशील, अष्टांगिक मार्ग और दश परि-मिताएँ सांसारिक दुःखों के हनन के लिए अमोघ शस्त्र हैं। आज अमेरिका सारे संसार से सम्पन्न होता हुआ भी मानसिक तौर पर दुखी है। चिन्तातुर है। ऐसे ही रूस का उदाहरण दिया जा सकता है। इनके दुख का कारण पारस्परिक द्वेष, अभिमान वैर और स्वार्थ प्रधानता ही तो है। इन दोषों का परित्याग पंचशील के विस्तार स्वरूप से दूर हो सकता है।

बौद्धों की निष्क्रियता और निराशावाद का ताना या उलाहना वैदिक याज्ञिकों द्वारा दिया गया है। वह यज्ञों के नामपर पशुओं को काटना और हवन में डालना कर्मण्यता और क्रियाशीलता मानते थे। इन घिनौने कृत्यों को छोड़ना और छोड़ने के लिए उपदेश देना बौद्धों का परम लक्ष्य था जो याज्ञिक हिन्दुओं के लिए असह्य था अतः बौद्धों पर निष्क्रियता और निराशावाद का धब्बा लगाना आरम्भ कर दिया। बौद्ध महाराजा अशोक, कनिष्क और हर्षवर्धन ने अन्य देशों पर अवश्य चढ़ाई नहीं की। निरीह लोगों का नाहक खून बहा कर उनकी भूमि नहीं छीनी, अतः वे हिन्दुओं की दृष्टि में भी और अकर्मण्य हैं। महाराजा अशोक ने सेना आक्रमण के बजाय, भिक्षुओं द्वारा धर्म-विजय की। क्या ऐसे धर्म परायण राजाओं को निष्क्रियाशीलता का ताना देना उचित है। किसी का हनन करने वाला वीर नहीं, सचा वीर वही है जिसमें किसी का अत्याचार सहने की क्षमता है। जो अपनी वासनाओं का नियन्त्रण करता है। जो अपने जीवन में सौ कष्ट सहकर भी दूसरों का भला करता है। जिसका लक्ष्य अपनी उदरपूर्ति नहीं, किन्तु "बहुजन सुख और बहु जन हित" है। भगवान् तथागत और उनके संघ का यही उद्देश्य रहा है। आलोचकों का कहना है कि गौतम स्त्री, बालक तथा वृद्ध पिता को छोड़कर चोरी से घर से भाग गये। अतः वे पलायनवादी थे। हम कहते हैं कि इसी भारत में नामालूम आजतक कितने राजकुमार हो गये हैं जो मृत्यु पर्यन्त अपने परिवारों में घिरे रहे और भगवान् गौतम की तरह घर से नहीं भागे। किन्तु उनका कोई नाम भी लेता है? उनका कोई भी ऐसा कारनामा अमर है जो आज तक जीवित है। क्या वे भगवान् बुद्ध की भाँति संसार में कोई ऐसा संदेश छोड़ गये हैं जो करोड़ों मानवों का पथ प्रदर्शक सिद्ध हो। भगोड़ा या पलायनवादी उसे कहा जाता है जो अपने ऐन्द्रिक सुख के लिए या अपनी कायरतावश अपने कर्तव्य से मुँह मोड़ जाय। भगवान् बुद्ध ने राज-सुख तथा पत्नी-प्रेम को छोड़ा था। किसी बड़े लक्ष्य के लिए जो मानवता की समस्या को हल करने वाला था। इन सुखों को लात मारी और पूरे छः वर्ष की साधना के पश्चात् मानवता के लिए अमृत खोज लाए। इन्हें पलायनवादी कहनेवालों की खोपड़ी बुद्धि से खाली है, या पक्षपात ने उनकी तर्क दृष्टि छीन ली है। भगवान् बुद्ध ने संसार की सत्ता को, मानव की सारी समस्याओं को हमेशा अपने सामने रखा है। संघ रचना केवल उपासकों की आध्यात्मिक तथा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सामाजिक कठिनाइयों के निवारण के लिए की। इन पतले दुबले भिक्षुओं ने धर्म, दर्शन, साहित्य, कविता, ललित कलाएँ, आयुर्वेद, मूर्तिकला, वास्तुकला तथा साहस भरी यात्रा करने में जो मिसालें कायम कर रखी हैं उन्हें जान कर कौन ऐसे पागलपन की बात कहेगा कि बौद्ध धर्म निष्क्रियता, उदासीनता तथा निराशावाद का प्रतीक है। बौद्ध सिद्धान्तरूपी शुद्ध सोना आज मानो मिट्टी के गोले गोले में छिपा दिया गया है और कहा जा रहा है कि देखो यह तो मिट्टी का ढेला है। पारखी ऊपर की मिट्टी को हटाकर उस गोले के अन्दर स्वर्ण की चमक-दमक देखने लग गये हैं। बौद्ध धर्म के सूर्य को भले ही काले घनघोर बादलों ने कुछ समय के लिए छिपा रखा है जिसका परिणाम यह है कि उल्लू समझ रहे हैं कि अब सूर्य सदा के लिए छिप गया अब अँधेरी रात रहेगी। किन्तु जैसे सघन बादलों को फाड़कर प्रखर तेज से सूर्य बाहर निकल आता है, वैसे ही अब हो रहा है और होता चला जायेगा।

भगवान् बुद्ध का धर्म जीवन संघर्ष से भागने के लिए कदापि उपदेश नहीं देता। हाँ, इस संघर्ष में पशुता की भावनाओं और अन्तर्वृत्तियों को जिसे हम ऐन्द्रिय सुख या भोग-विलास का नाम दे सकते हैं, बदल कर उन्हें सात्विकता प्रदान करना चाहता है। न तो वह ऐसे प्रवृत्ति मार्ग के प्रचारक हैं जिसमें क्षण भर भी आराम नहीं। अधिक से अधिक भोग-विलास और सुख सामग्री जुटाने के लिए जिसमें अनथक परिश्रम, दगा, फरेब, कुटिलता और धोखा-धड़ी तक दी जाय। वह इस 'अति' के समर्थक नहीं हैं। न ही वह इस अति के समर्थक हैं कि हम अपने जीवन में बिलकुल निरुत्साही और आलसी बन कर जीते-जी मुर्दा बन जायँ। भगवान् ने मध्यम मार्ग का उपदेश दिया है। भगवान् ने जीवन से पलायनवाद की शिक्षा नहीं दी, अतः बौद्धधर्म को निराशावाद और निष्क्रियता का द्योतक नहीं माना जा सकता। वृक्ष का सही पहचान उसका फल है। भगवान् बुद्ध के सिद्धान्त रूपी कल्पवृक्ष के फल कितने मधुर, स्वास्थ्यकर और लाभदायक रहे हैं उनका दिग्दर्शन इस लेख में पहले स्पष्ट कर कर दिया गया है। अतः सिद्ध हैं कि भगवान् बुद्ध का धर्म संदेश क्रियाशीलता, कर्मण्यता और आशावाद का सूचक और प्रेरक है। उसे निष्क्रियता और उदासीनता का प्रचारक कभी नहीं कहा जा सकता।

समाधि-भावना

श्री सत्यगवेषी

किसी वस्तु पर निश्चित समय के लिए चित्त को स्थिर रखना समाधि है। किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए समाधि आवश्यक है। इसे हम समाधि का सामान्य रूप कह सकते हैं। इस प्रकार की समाधि कम या अधिक परिमाण में चित्त की साधारण अवस्था में भी रहती है। यद्यपि इस अवस्था में चित्त किसी एक वस्तु पर स्थिर-सा दिखाई देता है फिर भी वस्तुतः वह अन्तरंग रूप से अनेक विषयों में व्यस्त रहता है। इसलिए साधारण अवस्था में विक्षेप भी रहता है। लेकिन ध्यान-भावना की अवस्था में प्राप्त समाधि इससे भिन्न है। उसमें पूर्ण एकाग्रता रहती है, किसी प्रकार का विक्षेप नहीं रहता।

अभावित चित्त अनेक विषयों में व्यस्त रहता है। वह बिना किसी उद्देश्य के एक विषय से दूसरे विषय पर दौड़ता रहता है। वह दो क्षण के लिए भी स्थिर नहीं रहता। इसलिए चित्त को अपने वश में रखना सब से कठिन कार्य है। लेकिन जहाँ उसे भावना द्वारा ठीक-ठीक शिक्षा मिल जाती है, उसे वश में रखना सबसे आसान काम हो जाता है। प्रत्येक आध्यात्मिक शास्त्र में चित्त-भावना के लिए भी एक-न-एक पद्धति बताई गई है। समाधि इसमें पहला कदम है।

स्थविरवाद में समाधि-भावना के अनुकूल चालीस कर्मस्थानों अर्थात् विषयों का उल्लेख आया है। बुद्धघोषा-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चार्य ने अपने महान् ग्रन्थ 'विसुद्धिमग्ग' में विस्तारपूर्वक इनका वर्णन किया है। छः चर्याओं के अनुसार इन कर्मस्थानों का विभाजन भी किया है। बौद्ध देशोंमें आज भी इन कर्मस्थानों के सहारे समाधि का अभ्यास किया जाता है। लेकिन यह कोई आवश्यक नहीं है कि इन्हीं विषयों पर समाधि का अभ्यास किया जाय। इनके अनुरूप किसी दूसरी वस्तु को भी इस काम में लिया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक सन्तरे को ले सकते हैं। सबसे अच्छा तरीका तो यह है कि कई वस्तुओं पर अमल करने के किसी एक अनुकूल वस्तु को चुन लें।

समाधि-भावना के सिलसिले में कुछ प्रारम्भिक बातों का ध्यान रखना चाहिये, जिनमें समय, स्थान और आसन मुख्य हैं। प्रातःकाल का समय सबसे अनुकूल है। उस समय शरीर और मन दोनों में स्फूर्ति रहती है। दिन का कार्यक्रम आरम्भ होते ही अनेक प्रकार के विक्षेप उत्पन्न हो जाते हैं। इसमें एक लाभ यह भी है कि समाधि का जो थोड़ा-बहुत अभ्यास सुबह किया जाता है, उसका प्रभाव दिन भर के कार्यक्रम पर पड़ सकता है।

भगवान् बुद्ध ने समाधि-भावना के लिए एकान्त स्थान ही अनुकूल बताया है। अनेक सुत्तन्तों में यह उपदेश आया है—अरण्य में या वृक्ष के नीचे या शून्यागार में अप्रमत्त हो समाधि का अभ्यास करो। यदि ऋतु अनुकूल हो तो खुला मैदान सबसे अच्छा है। शहर में जहाँ ऐसा स्थान उपलब्ध न हो, एकान्त कमरे में बैठकर समाधि-भावना का अभ्यास करना चाहिए।

सुजाता का खीर-दान

बौद्ध-योग में पद्मासन ही समाधि-भावना के लिए सबसे अनुकूल बताया गया है। भगवान् बुद्ध की अधिकांश मूर्तियाँ इसी विधि से बनाई गई हैं। इसलिए दूसरा नाम भी ध्यान-मुद्रा पड़ा है। पद्मासन लगा कर बैठ जाने पर शरीर सीधा रहता है। लेकिन जो इसके अभ्यस्त नहीं हैं, उन्हें इसमें भी कठिनाई हो सकती है। उसके लिए वही आसन ठीक है, जिसके वे आदी हैं। इस विषय में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि किसी प्रकारकी शारीरिक असुविधा नहीं होनी चाहिये। आसन इस प्रकार का हो जिससे कि तत्काल शरीर के अस्तित्व को भुलाकर समाधि में लीन रह सके। कहीं शरीर पर जोर पड़ा तो चित्तका विक्षेप हो जाता है। कोई कह सकता है कि इस दृष्टि से तो लेटना ही ठीक है। नहीं, यह ठीक नहीं है, क्योंकि इसमें नींद आने का डर रहता है। समाधि में जागरूकता सबसे आवश्यक है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जब ये प्रारम्भिक बातें पूरी हो जाती हैं तब आसन से चार या पाँच फीट की दूरी पर कर्मस्थान को रखकर उस पर ध्यान लगाना चाहिए। पहले-पहल उसके रंग, आकार परिमाण इत्यादि मुख्य गुणों पर विचार करें। कुछ समय के बाद गुणों का विश्लेषण न कर केवल वस्तु पर ध्यान लगावें। इस प्रकार के अभ्यास के बाद आँखों को बन्द कर मन में निमित्त का आवर्जन करें। जब बाह्य विषय का मानसिक चित्र उपस्थित हो जाता है तब उसी पर ध्यान लगावें। पर्याप्त अभ्यास के बाद ही इस अवस्था की प्राप्ति हो सकती है। जब इस अवस्था की प्राप्ति हो जाती है तब समझना चाहिए कि समाधि-भावना में कुछ सफलता मिल गई है। लेकिन यह सरल कार्य नहीं है। कुछ व्यक्तियों को छोड़कर दूसरे लोगों को इस प्राप्ति में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, इसमें भी सफलता की कुञ्जी निष्ठा और तत्परता है।

इस अवस्था में विद्यार्थियों को प्रारम्भिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। मन में तरह-तरह के विचार उठने लगते हैं और मन बेचैन हो जाता है। यह स्वाभाविक है। अब तक मन स्वतन्त्र रूप से जहाँ-तहाँ विचरण करता रहा है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि किसी विशेष दिशा में उसे मोड़ने के लिए प्रयत्न करने पर वह आपत्ति करे। कभी-कभी उत्तेजित होकर आपको नीचे गिराने की कोशिश भी कर सकता है। अभावित मन अदान्त घोड़े की तरह है लेकिन चतुर सारथी की शिक्षा से अदान्त घोड़ा भी दान्त हो बस में आ जाता है। इसी प्रकार उचित शिक्षा द्वारा मन को दान्त और विनीत बनाया जा सकता है।

मन में विक्षेप लानेवाले विचार दो प्रकार के हैं। ध्यान के विषय से सम्बन्वित विचार और दूसरे विषयों से सम्बन्धित विचार। ध्यान के विषय के रूप में यहाँ सन्तरे को ही ले सकते हैं। जब आप इस विषय पर मन को एकाग्र करने का प्रयत्न करेंगे तब वह आप को उस मीठे सन्तरे की याद दिला सकता है जिसको कि आपने एक या दो दिन पहले खाया था। वह आपको उन सन्तरों की भी याद दिला सकता है जिनको कि आपने बाजार में देखा था। इतना ही नहीं, वह आप को उन अनेक किस्म के सन्तरों की भी याद दिला सकता है, जो कि नागपुर, दार्जिलिंग इत्यादि प्रदेशों में होते हैं। इस प्रकार के विचारों की परम्परा आप के मन में उठ सकती है। ऐसी दशा में अन्त से लेकर प्रारम्भ तक इन विचारों का विश्लेषण कर इनके स्वभाव को समझना चाहिए। आधुनिक मनोविज्ञान भी इसी तरीके से काम लेता है।

जो विचार अन्य विषयों से सम्बन्धित हैं, वे तीन तरह से दूर किये जा सकते हैं—निग्रह, उपेक्षा और समाधान द्वारा। विचारों को दबाये जाने पर कुछ समय तक वे निष्क्रिय से रहते हैं। लेकिन अवसर पाते ही वे सबल हो उठते हैं। इस प्रकार निग्रह से विचार दुर्बल होने की अपेक्षा कभी-कभी सबल हो जाते हैं। आधुनिक मनोवैज्ञानिक अनुसन्धानों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि केवल निग्रह से चित्त में अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिए यह तरीका ठीक नहीं है।

यदि विचार बहुत सबल न हो तो उपेक्षा से काम ले सकते हैं। कुछ विचार ऐसे हैं जो कि हमारे चित्त के आस-पास मँडराते रहते हैं। हाँ, उनको आप कह सकते हैं कि तत्काल आप किसी आवश्यक काम में लगे हैं, इसलिए कुछ समय वे इन्तजार में रहें। जब आप उनकी ओर ध्यान नहीं देंगे तो सम्भवतः वे निराश होकर चले जायेंगे और फिर कभी दर्शन नहीं देंगे।

जो विचार सबल और उग्र हैं उन्हें समाधान से ही दूर किया जा सकता है। एक एक विचार की अर्जी को ध्यानपूर्वक सुनना चाहिए और देखना चाहिए कि वे कहाँ तक सत्य है। जब आप यह देखेंगे कि इनमें कुछ भी सत्य नहीं है; ये केवल ऊधम मचाने आये हैं तो यह कह कर उन्हें विदा कर देना चाहिए कि हमें आप लोगों से कोई मतलब नहीं है। उन्हें साफ-साफ कह देना चाहिए कि मैं आप जैसे अतिथियों का आदर नहीं करता। जब वे यह जान जायेंगे कि आप उनके स्वागत और सत्कार के लिए तैयार नहीं हैं तो वे सदा के लिए विदा हो जायेंगे।

उदाहरण के रूप में काम-वितर्क को ले सकते हैं। जब इस प्रकार का वितर्क उत्पन्न होता है तब न तो उसे दबाना चाहिए और न उसकी उपेक्षा ही करनी चाहिए। उसे अपनी अर्जी को पेश करने का मौका देकर उसकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

माँगों की सत्यता को परखना चाहिए। तब आपको यह समझने में अधिक देर नहीं लगेगी कि उसकी सुन्दर आशाएँ सब झूठी हैं। जब आप वस्तुस्थिति को इस प्रकार ठीक-ठीक समझ लेंगे तब आप के लिए उसके प्रलोभनों का कोई आकर्षण नहीं रहेगा। कुछ समय के बाद ये वितर्क उसी तरह विलीन हो जायेंगे जिस तरह सूरज के उगते ही कुहरा विलीन हो जाता है। किसी विचार को हम जितना अधिक महत्त्व देते हैं उतना अधिक वह हमारे ऊपर प्रभुत्व जमा लेता है। जिस समय से हम उसे महत्त्व देना छोड़ते हैं उसी समय से उसका प्रभुत्व भी समाप्त हो जाता है। इस तरह हम उन विचारों को दूर कर सकते हैं जो हमारे चित्त में विक्षेप लाते रहते हैं।

यहाँ पर इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि तुरन्त फल की प्राप्ति के लिए उत्सुक न हो। जब कोई बीज बोया जाता है तो उसके जमने, बढ़ने, फूलने और फलने में समय लगता है। हमारी चिन्ता इसमें काम नहीं करती। वह अपने समय से ही फलेगा। यह बात हमारे प्रयत्नों के विषय में भी सत्य है। वे समय पर ही सफल होंगे। मन के व्यापार अति सूक्ष्म हैं। यहाँ अच्छे संस्कारों द्वारा दीर्घकाल से घर किये हुए बुरे संस्कारों को दूर करना है। मन की गति को एक दिशा से दूसरी दिशा में बदल देना है। यह एक दुस्साध्य कार्य है। इसमें तत्परता और धैर्य की बड़ी आवश्यकता है। रोज एक या आध घण्टे की समाधि-भावना से जो कुछ हम लाभ करते हैं, उसे दिन भर के और कार्यों से नहीं बिगाड़ना चाहिए। इस पर ध्यान देने से जो कुछ इस थोड़े समय के अभ्यास से प्राप्त किया जाता है, दिनभर के कार्यक्रम से उसकी पुष्टि हो सकती है। जिस काम को हम तत्काल कर रहे हैं उसे तन्मयता के साथ करें। इस प्रकार प्रत्येक परिस्थिति को उस अभ्यास की वृद्धि का अवसर बनाना चाहिए। महासतिपट्ठान सुत्त में इसी बात की शिक्षा दी गई है। इस सूत्र में भगवान् ने हरएक काम को, वह कितना भी मामूली क्यों न हो, पूर्ण स्मृति के साथ करने का उपदेश दिया है। स्मृति से ध्यान की सिद्धि होती है। जहाँ स्मृति है वहाँ सब कुछ ठीक रहता है। कभी इस कथन के लिए अवसर नहीं देना चाहिए कि यह काम बिना सोचे किया गया है। इससे परिणाम में किसी प्रकार का अन्तर नहीं पड़ता।

कर्मस्थान एक उपायमात्र है। यह बनाई जानेवाली इमारत का डाट जैसा है। जब इमारत बनकर तैयार हो जाती है तब डाट को हटा दिया जाता है। इसी प्रकार जब चित्त एकाग्र हो जाता है तब कर्मस्थान को छोड़ देना चाहिए।

समाधि भी अपने में कोई लक्ष्य नहीं है। वह किसी लक्ष्य की प्राप्ति का एक उपायमात्र है। वह एक साधन है जिसको कि चित्त सत्य के समझने में प्रयोग करता है। वह मानो चित्त का सर्चलाइट है। जब सर्चलाइट की रोशनी बिखर जाती है तब लक्ष्य ठीक-ठीक दिखाई नहीं देता। इसी प्रकार जब चित्त में विक्षेप रहता है तब अन्तर्दृष्टि परिशुद्ध नहीं रहती। इसलिए सत्य के बोध के लिए समाधि आवश्यक है।

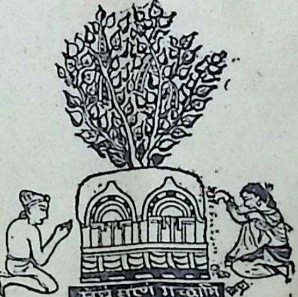

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बौद्धधर्म का वास्तविक स्वरूप

श्री सन्तराम, बी० ए०

धर्म की परिभाषा दूसरा चाहे कुछ और करे, परन्तु मैं तो उन नियमों और बातों को ही धर्म समझता हूँ जिनका पालन करने से मानव समाज में सुख-शान्ति रह सकती है। धर्म मनुष्य के लिए है। मनुष्य धर्म के लिए नहीं। यदि कोई कुरता मनुष्य के शरीर पर फिट न आए तो उस कुरते को ही काँट-छाँट कर फिट करना होता है, न कि शरीर को काट-तराश कर कुरते के लिए फिट करना। इसलिए देश, काल और परिस्थिति के अनुसार धर्म में भी परिवर्तन का होते रहना अत्यावश्यक है। अन्यथा, शीतकाल के वस्त्र ग्रीष्मकाल में पहनने के सदृश, वह धर्म समाज के लिए दुःखदायक हो जाता है। हिन्दूधर्म, बौद्धधर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम मूलतः मानव समाज को सुखी बनाने के ही प्रयत्न थे और इनके द्वारा समाज का हित भी हुआ, परन्तु बाद को जब इन धर्मों ने सम्प्रदाय का रूप धारण कर लिया और इनमें असहिष्णुता आ गई तो फिर ये मानव समाज के लिए उतने हितकर न रहे। इसीलिए प्रत्येक धर्म और प्रत्येक देश में समय-समय पर सुधारक उत्पन्न होते रहे हैं, जो धर्म में घुस आनेवाली बुराइयों को दूर करने का प्रयास करते रहे हैं।

भगवान् बुद्ध के आविर्भूत के समय तत्कालीन हिन्दू धर्म में कई दोष आ गये थे। उनके कारण वह समाज के लिए अत्यन्त दुःखदायी बन गया था, लोग धर्म की आत्मा या मौलिक सिद्धान्तों को भूलकर बाहर की रूढ़ियों और वादों पर ही सारा बल देने लगे थे। अहिंसा परम धर्म है। इस स्वर्णिम सिद्धान्त को छोड़कर यज्ञों में निरपराध पशुओं वरन् मनुष्यों तक की बलि देने लगे थे। "सब मनुष्य भगवान् के अमृत पुत्र हैं, तप में न कोई बड़ा है और न कोई छोटा", इस वैदिक उपदेश की अवहेलना करके ऊँच-नीच मूलक चातुर्वर्ण्य और उसके अनिवार्य परिणाम अस्पृश्यता की सृष्टि की गई थी। "द्विज पतित भी हो तो भी जितेन्द्रिय शूद्र से श्रेष्ठ है", जैसे मानवी समता और बन्धुता के घातक वादों का बोलबाला था। मानवता इस हिन्दू धर्म के अत्याचारों से कराह रही थी। लोगों की बुद्धि पर ताला लगा दिया गया था, 'बाबा वाक्यं प्रमाणम्' ही सब कुछ था। ऐसे अविद्यान्धकार और अन्याय अत्याचार से दूर करने के लिए निसर्ग के अटल नियमानुसार, किसी मानवता-हितैषी सुधारक का आगमन अनिवार्य था। वही सुधारक बुद्धदेव थे।

प्राध्यापक रङ्गाचार्य अपनी पुस्तक, "रामानुज एण्ड वैष्णविज्म"। में लिखते हैं :—

भारतीय सभ्यता में विचार के विकास के कारण यह आवश्यक हो गया कि कर्म-काण्ड के प्राचीन वैदिक धर्म का स्थान कोई ऐसा दूसरा धर्म ले ले जिसमें वास्तविक जीवन अधिक हो, और जो जाति, वर्ण और सामाजिक स्थिति का विचार दौड़कर मानव-हृदय की धार्मिक आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को सन्तुष्ट करने में अधिक सबल हो। इस पर भी वह नवीन धर्म सर्वथा नवीन नहीं हो सकता था। सच पूछो तो सभी सभ्यताओं के इतिहास में धर्म की प्रगति इस प्रकार होती है कि कोई भी नया धर्म आमूल या अमिश्रित रूप से नया नहीं हो सकता। जब लोगों के तात्कालिक लाभ के लिए उनमें किसी नई संस्था या किसी नये विचार का प्रचार करना होता है तो सदा ऐसा होता है कि यह नवीन संस्था या नवीन विचार किसी सचमुच पुरानी चीजपर रोप दिया जाता है।" बुद्ध ने चातुर्वर्ण्य विभाग को आमूल मिटाया नहीं, वरन् उसे जन्म के स्थान में गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर मानने को कहा। उपालि नाई और सुनीत भंगी को उन्होंने स्वधर्म में दीक्षित कर धर्मोपदेष्टा और अर्हत बना दिया परन्तु हम देखते हैं कि उनके काल में वर्णभेद मिटा नहीं। हाँ सम्राट् अशोक के काल में चातुर्वर्ण्य पर गहरी चोट पड़ी और यह भेद-भाव बहुत कुछ दब गया।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

परन्तु यह जातिभेद एक ऐसी बला है कि जिसे द्वार के मार्ग से बाहर निकालो तो यह खिड़की के रास्ते भीतर घुस आती है। यह नाना रूप धारण कर छिप जाती है और सुअवसर पाकर पुनः आ धमकती है। अशोक के उपरान्त ब्राह्मण धर्म ने फिर सिर उठाया और उसके साथ ही जाति-भेद का राक्षस फिर समाज के सिर पर आ सवार हुआ। तुलसीदास जैसे प्रभु-परायण, भक्त शिरोमणि समझे जाने वाले सज्जन ने भी कह दिया :—

पूजिय विप्र शील-गुण-हीना।
शूद्र न गुण-गण-ज्ञान-प्रवीना॥

भगवान् बुद्ध ने यजुर्वेद काल के कर्मकाण्ड और यज्ञ-दान आदि की रूढ़ियों से जनता को छुटकारा दिलाया। उन्होंने किसी भगवद्वाणी, किसी ईश्वरीय आदेश या किसी पहुँचे हुए महात्मा की बात को आँखें बन्द करके मान लेने से जनता को रोका। इसके विपरीत इन्होंने सबको अपनी बुद्धि से सोचकर काम करने का उपदेश किया। उन्होंने सब को अपना दीपक आप बनने को कहा। उनका यह पग बड़ा क्रान्तिकारी था। परन्तु महाकवि इकबाल के शब्दों में—

वारिशे रहमत हुई।
लेकिन जमीं काबिल न थी॥

अब तक भी :—

आह शूद्र के लिए हिन्तोस्तां गम खाना है।
दर्दे इन्सानी से इस बस्ती का दिल बेगाना है॥

मैं तो मानव समाज, विशेषतः भारत के लिए बौद्ध धर्म की आवश्यकता इसीलिए समझता हूँ कि यह जन्मना ऊँच-नीच मूलक वर्ण-व्यवस्था को मानने से इनकार करता है, यह समता और बन्धुता पर बल देता है, और सब को अपनी बुद्धि के प्रकाश में चलने को कहता है। आज भारत में बौद्धधर्म के पुनरुत्थान के कुछ लक्षण प्रकट हो रहे हैं। उन्हें देख प्रसन्नता भी होती है। परन्तु डर है कि यह भी संप्रदाय बनकर ही न रह जाय। अछूत जातियों के जो लोग आज बौद्ध बन रहे हैं वे यदि जात-पाँत में पूर्ववत् फँसे रहे तो बौद्ध का अर्थ उसी प्रकार भँगी-चमार हो जायगा, जिस प्रकार सिक्खों में रैदासिया और मजहबी सिख का अर्थ चमार और भँगी है, और आर्य-समाज में भक्त और महाशय का अर्थ मेहतर और डोम है। भारत में बौद्धधर्म के पुनरुत्थान से जनता का हित तभी हो सकता है जब ये नवीन बौद्ध कम-से-कम आपस में तो जात-पाँत तोड़कर बेटी-व्यवहार करने लगें, आपस में ही जातिभेद का दुर्भाव दूर करें। ऊँची जातियों के हिन्दू यदि इनसे बेटी-व्यवहार नहीं करते तो न सही। इन नवीन बौद्धों के एक जाति-वर्ण-विहीन समाज बन जाने से कालान्तर में कथित ऊँची जातियों को भी झक मार कर इधर आना पड़ेगा। मैं उस शुभ दिन की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा हूँ। यदि नवीन बौद्ध भी दूसरे हिन्दुओं के समान रूढ़ियों और वादों में फँस गये तो उनका यह धर्मान्तर निष्फल हो जायगा। इस बात का ध्यान रखने का बड़ा प्रयोजन है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्थविरवाद में निर्वाण

श्री महेश तिवारी, एम० ए०

बौद्ध दर्शन के अनुसार मनुष्यजीवन की चरम प्राप्ति निर्वाण का अधिगम है। इसी को लक्ष्य कर साधक आर्य-मार्ग पर अग्रसर होता है तथा इसे प्राप्त कर सब कुछ प्राप्त कर लेता है। साधक के ब्रह्मचर्य जीवन के समस्त कार्यों की सफलता एवं सार्थकता इसी की प्राप्ति में निहित है। यहाँ पहुँच कर उसके भवचक्र का बन्धन सदा के लिए टूट जाता है तथा वह सदा के लिए दुःख की ज्वाला से मुक्त हो जाता है। भगवान् बुद्ध ने निर्वाण के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है—"जिस प्रकार महासमुद्र का एकमात्र स्वाद लवणरस होता है उसी प्रकार मेरे धर्म विजय का एकमात्र रस विमुक्ति रस है। जिस प्रकार समस्त नदियाँ सागरोन्मुख हैं। उसी प्रकार मेरे समस्त उपदेश निर्वाण की ओर अवनत हैं।"

निर्वाण शब्द का अर्थ कई प्रकार से उपलब्ध होता है। यह शब्द दो पदों से बना है। वे हैं 'नि' तथा 'वान', 'नि' उपसर्ग है, जिसका अर्थ निषेधात्मक है। 'वान' का अर्थ तृष्णा है।

तृष्णा का क्षय ही निर्वाण है—"तण्हाय विप्पहानेन निब्बानं इति वुच्चति।" निर्वाण का दूसरा प्रयोग प्रदीपवत् बुझ जाने के अर्थ में देखा जाता है—"निब्बन्ति धीरा यथायं पदीपो"। निर्वापित अग्नि के सहारे भी कई स्थलों पर इसे व्यक्त किया गया है। आचार्य बुद्धघोष ने चित्त को क्लेशों से रहित हो जाने, आध्यात्मिक सुख, शान्ति, विजय आदि अर्थों में निर्वाण का प्रयोग करते हुए इसे समस्त मलों से रहित अत्यन्त परिशुद्ध बतलाया है—सब्बमलविरहितं अच्चन्तपरिसुद्धं निब्बानं।"

भगवान् बुद्ध एक व्यावहारिक तथा विवेकशील विचारक थे। उन्होंने अपने शिष्यों को कल्पना के जाल में उलझाना उचित नहीं समझा, बल्कि व्यावृत चक्षु से उपस्थित प्रश्नों को सुलझाना उचित बतलाया। इस उद्देश्य से उन्होंने ऐसे प्रश्नों को कि—लोक सान्त है या अनन्त, शाश्वत है या अशाश्वत"—अव्याकृत बतलाया है। उनके अनुसार चार आर्यसत्य या तत्सम्बन्धी प्रश्न ही व्याकृत हैं। इसमें जो तृतीय आर्यसत्य है वह तो निर्वाण है तथा चतुर्थ आर्यसत्य उसकी प्राप्ति का मार्ग है। इस मार्ग पर सम्यक् रूप से प्रतिपन्न साधक इसी जीवन में निर्वाण को प्राप्त कर लेता है।

अब यहाँ यह प्रश्न विचारणीय प्रतीत होता है कि भगवान् बुद्ध द्वारा प्रतिपाद्य यह निर्वाण एक भावपदार्थ है या अभावमात्र है। इस उद्देश्य से अग्रसर होने पर प्रकट होता है कि पिटकों में निर्वाण के स्वरूप के सम्बन्ध में मुख्यतः तीन प्रकार की बातें कही गयी हैं। कहीं उसे एकभाव पदार्थ के रूप में दर्शाया गया है, तो कहीं उसकी चर्चा अभाव-सी उपलब्ध होती है। कतिपय स्थलों पर उसे अकथनीय बतलाते हुए वर्णन उपस्थित किया गया है। जहाँ पर उसकी एक भाव पदार्थ के रूप में चर्चा की गई है वहाँ उसे परमसुखपद, अमृतपद, अच्युतपद, शिवपद, अनुत्तरयोगक्षेम, परमशान्ति, सुख-आयतन, सुरक्षितद्वीप आदि शब्दों से व्यक्त किया गया है। अभाव के रूप में उपस्थित करते हुए निर्वाण को क्लेशों का क्षय, तृष्णा का क्षय, निरोध, भवनिरोध आदि कहा गया है। 'निर्वाण अनिर्वचनीय है'—ऐसा कहते हुए उसे प्रदीपवत् बुझ जाना, निर्वापित अग्नि के समान हो जाना, उपमा, व्याख्या, तर्क, नय आदि से न व्यक्त किये जाना, आदि कहा गया है।

अब निर्वाण के स्वरूप के सम्बन्ध में—"भाव, अभाव तथा अनिर्वचनीय"—तीनों प्रकार की उक्तियों को प्राप्त कर प्रश्न उत्पन्न होता है कि यह विविधता क्यों? निर्वाण तो प्रायः समस्त बौद्ध परम्पराओं के अनुसार एक तथा नित्य माना गया है। एक ही पदार्थ को भाव-अभाव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तथा अनिर्वचनीय कैसे कहा जा सकता है। एक तथा नित्य होने के कारण उसमें स्वभाव भेद नहीं होना चाहिए। यदि उसमें स्वभाव भेद है तो वह नित्य तथा एक नहीं हो सकता है।

इस उलझन को लेकर उसके स्वरूप पर निकट से दृष्टि डालते हुए अग्रसर होने पर प्रकट होता है कि उसके स्वरूप सम्बन्धी जो विविधता पायी जाती है वह यथार्थ नहीं है। वस्तुतः निर्वाण एक नित्य है तथा भाव पदार्थ है। स्वरूप की विविधता प्रतीतिमात्र है। जो पद उसे अभावात्मक तथा अनिर्वचनीय बतलाते हुए से हैं, वे भी उसे नयभेद से भावात्मक ही बतलाते हैं।

निर्वाण को अभावात्मक बतलाते हुए कहा गया है कि निर्वाण निरोध है, क्लेश क्षय है इत्यादि। ये पद उसे अभावरूप नहीं बतलाते हैं बल्कि निषेधात्मक प्रणाली से उसे एक भाव पदार्थ के रूप में उपस्थित करते हैं। दुःख का निरोध अर्थात् अभाव का अर्थ है सुख का भाव। अतः जब यह कहा जाता है कि निर्वाण निरोध है तो इसका अभिप्राय मात्र इतना ही है कि निर्वाण लाभ के साथ-साथ समस्त दुखों का निरोध हो जाता है अर्थात् सुख की प्राप्ति होती है। निरोध शब्द सुख की प्राप्ति का द्योतक है न कि अभाव का। "निर्वाण क्लेशक्षय है", इस कथन से भी उक्त न्याय से उसके परम परिशुद्ध रूप की अभिव्यक्ति होती है।

जहाँ निर्वाण को अनिर्वचनीय कहा गया है वहाँ भी इसकी भावरूप में सिद्धि देखी जाती है। अनिर्वचनीय का केवल इतना ही अर्थ है कि शब्दों द्वारा निर्वाण के यथार्थ स्वरूप का परिचय नहीं दिया जा सकता है। इसका कारण यह है कि व्यावहारिक शब्दों की सीमाबद्धता है तथा निर्वाण असीम है, शब्द लोकीय है तथा निर्वाण लोकोत्तर है। अतः लोकीय एवं सीमित शब्दों द्वारा लोकोत्तर निर्वाण के स्वरूप को आंकना सम्भव कहाँ, इसे लक्ष्य करते हुए ही भगवान् बुद्ध ने वच्छगोत्तसुत्त में कहा है कि—"यह धर्म गम्भीर, दुरनुबोध, तर्क से परे आदि हैं। पुनः जो यह कहा गया है कि 'उपमा नय' आदि से निर्वाण को व्यक्त नहीं किया जा सकता है उसका अभिप्राय इस प्रकार समझना चाहिए। महासमुद्र के सम्बन्ध में यह नहीं कहा जा सकता है कि उसमें कितना जल है। या कितने जीवजन्तु हैं पर इस अनिर्वचनीयता के कारण उसका अस्तित्व असिद्ध नहीं है बल्कि समुद्र का अस्तिभाव प्रत्यक्ष सिद्ध है। उसी प्रकार उपमा, नय, तर्क आदि के सहारे वचनीय न होने के कारण निर्वाण को अभाव नहीं कहा जा सकता है बल्कि समुद्र की भाँति वह भी एक भाव पदार्थ है।

निर्वाण को अन्य कई दृष्टियों से अभाव नहीं माना जा सकता है। कोई भी कार्य यदि कोई करता है तो वह किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए करता है। वह प्रतिपदा ही सार्थक समझी जाती है जिस पर चल कर किसी भाव पदार्थ की प्राप्ति हो। यदि किसी लक्ष्य को लेकर अग्रसर होते हुए अथक परिश्रम किया जाय और अन्त में कुछ भी न मिले तो वह प्रयत्न निरर्थक कहा जायगा। इस दृष्टि से यदि हम भगवान् बुद्ध द्वारा प्रतिपाद्य प्रतिपदा पर विचार करें तो निर्वाण को अभाव मानना युक्त नहीं होगा। क्योंकि भगवान् के निर्दिष्ट पथ पर चलता हुआ साधक शील का पालन करता है, धुतांग धारण करता है, समाधि का अभ्यास करता है, प्रज्ञा का साक्षात्कार करता है। यदि ये सारे कर्म अन्त में निरर्थक सिद्ध हों तो इनकी आवश्यकता ही क्या रही। भगवान् का ब्रह्मचर्य जीवन ही किसलिए।

आचार्य बुद्धघोष ने भी निर्वाण को अभाव रूप में अस्वीकार किया है। उन्होंने स्पष्टोक्ति दी है कि यदि कोई यह कहे कि शशविषाण की भाँति न उपलब्ध होने के कारण निर्वाण अभाव है, तो ऐसा कहना उचित नहीं। किसी भी उपाय से शशविषाण की उपलब्धि नहीं हो सकती है पर निर्वाण का आर्यमार्ग पर चलकर साक्षात्कार किया जाना अनुभव सिद्ध है। इसकी उपलब्धि होने के कारण यह अभाव नहीं हो सकता है। यह पृथक् जनों द्वारा उपलब्ध न होने के कारण भी अभाव नहीं हो सकता है क्योंकि यह उनकी पहुँच से दूर है तथा आर्यों द्वारा प्राप्य है। साथ ही निर्वाण को अभाव मानने से आठ अंगों से युक्त मध्यमप्रतिपदा ही बन्ध्या हो जायगी। यस्मात् मध्यम प्रतिपदा का बन्ध्या न होना आर्यों द्वारा अनुभव सिद्ध है, अतः निर्वाण अभाव नहीं हो सकता

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। इस पर यदि कोई ऐसा कहे कि भले ही निर्वाण लाभ से किसी भाव-पदार्थ की प्राप्ति नहीं हो पाती हो पर ऐसा कहने में क्या दोष है कि इससे अभाव की प्राप्ति होती है ? ऐसा मान लेने से तो मध्यम प्रतिपदा भी बन्ध्या नहीं होती है। ऐसे तर्क का उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है कि बौद्ध दर्शन के अनुसार भूत तथा भविष्यत् को भी अभाव माना गया है। यदि अभाव को निर्वाण माना जाय तो भूत भविष्यत् को भी निर्वाण माना जा सकता है। यह बौद्धों को मान्य नहीं हो सकता है। अतः निर्वाण अभाव नहीं हो सकता है।

निर्वाण एक भाव पदार्थ है। इसका प्रमाण भगवान् की चर्चा से मिलता है। देखा जाता है कि जब उन्होंने सम्बोधि की प्राप्ति की तो सात सप्ताहतक सात आसनों से उसका आनन्द लेते रहे। मज्झिम निकाय में इसकी तुलना राज्य सुख से करते हुए इसके आगे उन्होंने राज्य सुख को तुच्छ बतलाया है। निर्वाण परम सुख है—निब्बानं परमं सुखं, निर्वाण सुख से बढ़कर अन्य सुख नहीं है, ऐसे भगवान् के अनेक वचन उपलब्ध हैं। स्थविर नागसेन ने इसे एकान्ततः सुखपूर्ण बतलाते हुए ईति, उपद्रव आदि से रहित, अभय, क्षेमयुक्त, शान्त सुखपूर्ण शुचि, शीतल तथा पवित्र अस्तिधर्म कहा है। इसके सुखात्मक स्वरूप का परिचय देते हुए मिलिन्द प्रश्न में उपमाओं की एक लम्बी तांत प्रस्तुत की गयी है। अन्य स्थविरों के भी अनेक उद्गार इस आशय को व्यक्त करते हुए उपलब्ध हैं कि निर्वाण अमृतपद, शान्तपद है—"तत्थेव विरजं धम्मं फुसयिं अमतं पदं"। इन सब उपलब्ध तथ्यों के आधार पर निर्वाण को एक भाव पदार्थ कहा जा सकता है। आचार्य अनुरुद्ध ने ठीक ही कहा है—

पदमच्चुतमच्चन्तं असंखतमनुत्तरं।
निब्बानमिति भासन्ति वानमुत्ता महेसयो॥

निर्वाण दो प्रकार का कहा गया है—सउपादिशेष निर्वाण तथा अनुपादिशेष निर्वाण। सउपादिशेष निर्वाण वह अवस्था है जब कि साधक अपने परम परिशुद्ध पंच स्कन्धों के साथ रहता है। इसे जीवनमुक्ति भी कहा जा सकता है। अनुपादिशेष निर्वाण की अवस्था में पंच-स्कन्धों का भी निरोध हो जाता है। अतः निर्वाण के दो रूपों पर ध्यान देते हुए यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि जहाँ तक शान्त सुखप्रद शीतल अस्तिरूप निर्वाण की अनुभूति की बात है वह तो केवल सउपादिशेष निर्वाण से ही सम्बन्धित है। अनुभूति विज्ञान के द्वारा संभव है। सउपादिशेष निर्वाण की अवस्था में अन्य स्कन्धों के साथ-साथ विज्ञान स्कन्ध भी विद्यमान रहता है। अतः उसके द्वारा यह जाना जा सकता है कि निर्वाण परम सुखप्रद शान्त एवं शीतल है। पर अनुपादिशेष निर्वाण की अवस्था में पंचस्कन्धों के निरुद्ध हो जाने के बाद यह जाना कैसे जा सकता है कि निर्वाण कैसा है। वहाँ तो जानने का साधन ही नहीं रह जाता है। यहाँ पहुँच कर यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि तब क्या अनुपादिशेष निर्वाण साधक की शाश्वतमृत्यु है, या रिक्तता है, या अभाव है, या उच्छेद है ?

अब यहाँ दो पक्ष हो सकते हैं। प्रथम यह कि अनुपादिशेष निर्वाण की अवस्था में पंच संस्कृत स्कन्धों का निरोध हो जाता है पर एक असंस्कृत नित्य विज्ञान बना रहता है जिसके द्वारा निर्वाण के स्वरूप की अनुभूति होती रहती है। दूसरा यह कि वहाँ पंच स्कन्ध सदा के लिए निरुद्ध हो जाते हैं और वह अवस्था अनुभूति रहित है। इनमें प्रथम पक्ष के समर्थन में बुद्धवचन उपलब्ध नहीं है पर द्वितीय के सम्बन्ध में स्वीकारात्मक बातें प्राप्त हैं। अनुपादिशेष निर्वाण की अवस्था भी एक अस्तिरूप है पर वह अनुभूति एवं अभिव्यक्ति से परे है। इसको हम इन गाथाओं से समझ सकते हैं—

"अच्चि यथा वातवेगेन खित्तो,
अत्थं पलेति न उपेति संखं।
एवं मुनि नाम काया विमुत्तो,
अत्थं पलेति न उपेति संखं॥
अयोघनहतस्सेव जलतो जातवेदस्स,
अनुपुब्बूपसन्तस्स यथा न जायते गति।
एवं सम्मा विमुत्तानं कामबन्धोघतारिणं,
पञ्ञपेतुं गति नत्थि, पत्तो सो अचलं सुखं॥"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निर्वाण

श्री विश्वनाथ वाजपेयी

वह आस्था अवस्था व्यवस्था
जिसके परे कुछ नहीं
महाशून्य का वह अंतिम सोपान
जिसके बाद सत्ता नहीं
वह सुख-दुःखातीत
ज्ञेय-अज्ञेयातीत
जिसमें कोई
वेदना या बोध नहीं
जहाँ इन्द्रिय-अतीन्द्रिय का
प्रश्न नहीं
भाव-अभाव की
समस्या नहीं
जो क्लेशावरण का क्षय है
मोहावरण का लय है
ज्ञेयावरण का उदय है
दुःखत्रयाभिघात से
निवृत्ति है
अहोरात्रिक भव-चक्र से
विमुक्ति है
वही निर्वाण है,—
वह लोकोत्तर है
मुमुक्षु की अभिलाषा
अर्हन्तों की भाषा
स्रोतापन्नों की आशा है।

× × ×

अभाव में
तृण-काष्ठ और तेल के
अग्नि और दीप नहीं जलते
तृष्णा के अभाव में
संस्कार नहीं बनते
व्यक्तित्व खड़ा नहीं होता
संस्कार के लोप होने से
फिर न होता पुनर्जन्म
न चलता भवचक्र
न दुःख का अभिघात ही होता
लीन हो जाता समस्त
उस निर्वाण-पद में।
जैसे बुझा दीप
न अन्तरिक्ष में
न अवनि में
न दिशा-विदिशा में जाता
केवल हो जाता है शान्त
वैसे ही व्यक्ति,
जो निर्वृत्त क्षीणास्रव
शान्त हो जाता है,
कोई नवीन संस्कार रूपी अंकुर
नहीं फेंकता
दग्ध-बीज की तरह।
कोई कहे
निर्वाण समाप्ति है
कोई कहे
निर्वाण स्थिति है
दोनों हैं मिथ्या।

× × ×

अमृतत्व की उपलब्धि
कृतकृत्यत्व का बोध
अपहितभारत्व की अनुभूति
ही
अनिर्वचनीय
अव्याकृत
असंस्कृत-धर्म
निर्वाण है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चरम परिणति
चरम अवसान
चरम उत्थान,
बुद्ध के समस्त पांडित्य का
निचोड़
लाख-लाख अनुयायिओं का
अंतिम लक्ष्य
जिसके लिए
कुल-पुत्र
घर से बेघर बन
प्रव्रजित हो जाते हैं
जिनके
शङ्ख-लिखित-ब्रह्मचर्य के
सेवन का प्रतिफल-स्वरूप
है यह निर्वाण।

यह गूँगे का गुड़—
स्वाद है
रस है
अभिव्यक्ति नहीं।
फिर जन्मान्तर नहीं
आशा-प्रत्याशा-निराशा नहीं
सुख-भोग अघ-ओघ नहीं
गति नहीं फिर
मानों स्थिर बन गया
कुलाल-चक्र कोई,
समुद्र में लीन
सरिता की तरह
सत्ता समाप्त
शान्त
परिश्रान्त
एकान्त!

भगवान् बुद्ध

श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य

आज भगवान् बुद्ध के परम कल्याणकारी सिद्धान्तों पर किसे श्रद्धा नहीं? क्या वे सिद्धान्त किसी भी संघ की सीमा को लाँघ नहीं गये? किसके हृदय को वे अपनी ओर आकर्षित नहीं कर लेते? जिन्होंने भगवान् बुद्ध की शरण भी स्वीकार नहीं की, वे भी उन सिद्धान्तों के सम्मुख नतमस्तक हैं। जो उनके सिद्धान्तों को स्वीकार करते हैं, वे सांस्कारिक अनुष्ठान को पूरा किये बिना भी सच्चे बौद्ध हैं। धर्म सिद्धान्तों में है, सस्कारों में नहीं। यदि संकीर्ण संस्कारों में मनुष्य को संबद्ध न किया होता, तो सम्भवतः मनुष्य मनुष्य में इतना व्यापक विभाजन भी न होता, न परस्पर घृणा का प्रसार ही होता।

जातक कथाएँ भगवान् बुद्ध के अनेक जन्मों की कथाएँ ही हैं।

किसी जन्म में भगवान् बुद्ध बंजारा हुए, तो किसी में स्वर्ण मृग। बैल, बटेर, तित्तर, बक, कबूतर, चूहा, गोह, वृक्ष देवता, गृद्ध, बन्दर, मछली, सिंह, शश, मोर, इत्यादि कितनी ही योनियों में उन्होंने जन्म लिये। मनुष्य की भी योनि में एक बार नहीं अनेक बार उन्होंने जन्म लिया, और मनुष्य जीवन की अनेक रूपता का अनुभव किया। वे राज-पुत्र हुए, मन्त्री हुए, ब्राह्मण हुए, शूद्र हुए, साहूकार भी हुए, चोर भी हुए, कंजूस भी हुए, उदार भी हुए। आर्यशूर की जातक माला में ऐसे ३४ जन्मों की कथाएँ हैं। परन्तु महावस्तु नामक ग्रन्थ में ८० कथायें मिलती हैं। पालि-साहित्य के अनुसार इन जातक कथाओं की संख्या ५५० है।

प्रत्येक जन्म की कथा में भगवान् बुद्ध ने क्या अभिनय किया है, यही अध्ययन के योग्य है। वे प्रत्येक जन्म में दुष्कृत्यों का परिहार करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। प्रत्येक जन्म में उनका जीवन पाप और पुण्य के बीच एक भयंकर युद्ध है। वे पापों को पराजित करते हैं और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपनी दुर्बलताओं पर विजय पाते हैं। प्रत्येक जन्म में उनका जीवन सन्मार्ग की ओर अग्रसर है। सत्य प्रेम की एक अबाध धारा बुद्धत्व की ओर बढ़ती हुई सहज दर्शनीय है। वह अबाध धारा, पशु की योनि में भी क्षीण नहीं पड़ती, पक्षी की योनि में भी क्षीण नहीं पड़ती। मनुष्य की योनि में क्षीण पड़ना ही क्यों चाहिये। सदाचार की कहीं पराजय नहीं।

भगवान् बुद्ध की प्रत्येक जन्म-कथा इसी एक बात की द्योतक है। एक बार बोधिसत्व वाराणसी में एक ब्राह्मण के घर पैदा हुए। वे अन्य विद्यार्थियों के साथ एक आचार्य के यहाँ शिक्षा पाने लगे। आचार्य की एक आयु प्राप्त लड़की थी। वे उसे किसी सदाचारी विद्यार्थी को देना चाहते थे। अतः विद्यार्थियों के सदाचार की परीक्षा लेने के अभिप्राय से उन्होंने एक दिन अपने सब विद्यार्थियों से कहा—मैं अपनी पुत्री का विवाह करना चाहता हूँ। तुम लोग अपने सम्बन्धियों की दृष्टि बचाकर अपने घर से उसके लिए वस्त्राभूषण लाओ। मैं ऐसे ही वस्त्राभूषण स्वीकार करूँगा जो किसी ने देखे न हों। विद्यार्थी चोरी-चोरी बहुमूल्य वस्त्राभूषण लाने लगे। परन्तु बोधिसत्व कुछ भी नहीं लाये। आचार्य के कारण पूछने पर उन्होंने कहा—आप चोरी से लाई हुई चीज ही ग्रहण करते हैं, परन्तु पाप करने के लिए मुझे कोई छिपी जगह नहीं दिखती। जहाँ कोई नहीं होता, वहाँ मैं तो होता ही हूँ। आचार्य ने बोधिसत्व को अपनी लड़की दे दी। अन्य विद्यार्थियों के लाये हुए वस्त्राभूषण लौटा दिये।

भगवान् बुद्ध

पशु पक्षियों की योनि में भी उनका यह सदाचार और परोपकार विकास करता है। एक समय वह वाराणसी में मृग की योनि से स्वर्ण-मृग के रूप में पैदा हुए। वह जंगल में पाँच सौ मृगों के साथ रहते। उनका नाम पड़ा निग्रोध मृगराज। उसी जंगल में एक दूसरा मृग भी पाँच सौ मृगों के साथ रहता था। वह भी स्वर्ण वर्ण का था, और उसका नाम था शाखामृग।

उस समय वारणसी का राज मृगों का वध करा रहा था। वह सारे नगर के लोगों को लेकर प्रति दिन शिकार को जाता। एक दिन लोगों ने सोचा कि इससे हमारी बड़ी हानि होती है, क्यों न सब मृगों को किसी एक उद्यान में घेर कर हम लोग बन्द कर दें, और राजा उनका शिकार खेलता रहे। उन लोगोंने ऐसा ही किया। राजा ने ऐसा ही किया। राजा ने उद्यान में जाकर मृगों को देखा और प्रसन्न हुआ। उसने स्वर्ण मृगों को अभय दान भी दिया। परन्तु उद्यान में भी शिकार करते बहुत से मृग व्यर्थ ही मारे जाते। इस पर मृगों ने एक एक मृग रोज राजा के रसोई घर बारी-बारी भेजना प्रारम्भ किया। एक दिन शाखामृग के झुण्ड की गर्भणी मृगी की बारी आयी, और वह शाखमृग के पास गयी। परन्तु शाखामृग ने कुछ भी दया न दिखलायी। इस पर वह बोधिसत्व के पास आई बोधि-सत्व उसके बदले स्वयं गये, और धर्म गण्डिका स्थान पर सिर रख कर लेट रहे। नौकरों ने इस बात की सूचना राजा को दी और राजा वहाँ आया। राजा बोधिसत्व के त्याग और परोपकार से बहुत प्रभावित हुआ और उसने प्राणी मात्र को अभय दान दे दिया।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आज के विज्ञान के युग में मनुष्य को इन जातक कथाओं में विश्वास हो या नहीं, परन्तु इनमें प्राणिमात्र के कल्याण की जो उदात्त भावना छिपी है उस पर तो कोई संदेह कर ही नहीं सकता। वे हमें सिखलाती हैं कि मनुष्य का जन्म हर योनि में सम्भव है, जो आज मनुष्य के रूप में है, वही अगले जन्म में पशु के रूप में भी पैदा हो सकता है, अतः पशु भी हमारी दया और सद्व्यवहार के पात्र हैं। वह हमें यह भी सिखलाती है कि मनुष्य और पशु के रूप में मनुष्य अपने ही कर्मों से पैदा होता है। यही नहीं, कर्मों से मनुष्य, मनुष्य होते हुए भी पशु की श्रेणी में गिना जा सकता है, और पशु भी मानवोचित आदर का पात्र बन सकता है। आज का मनुष्य यह कहने में कि वह पूर्व जन्म में चक पशु था, निश्चय ही संकोच करेगा, फिर सर्प और गोह जैसे भयंकर जीव बनने की तो उसे कल्पना की अप्रिय होगी। परन्तु भगवान् बुद्ध ने लोक-कल्याण की भावना से अपने सर्प और गोह इत्यादि के जन्मों की भी कथा कही है। बुद्ध भगवान् ही मानव इतिहास में जीवन चरित्रों के व्याख्यों में सर्वप्रथम रूप में आते हैं। जिन्होंने अपने अगणित पूर्व जन्मों का वर्णन किया है।

पूर्व जन्म का ज्ञान किसे सन्मार्ग पर नहीं चलायेगा। यही निर्वाण का मार्ग है। और यह शील, समाधि और प्रज्ञा से ही प्राप्त हो सकता है। संसार में अपने कर्मों का फल तत्काल नहीं मिलता, परन्तु उनका ज्ञान अवश्य मिल सकता है कि कैसे कर्म का फल कैसा होता है। बुद्ध भगवान् की ये जातक कथायें कर्म फल की ओर ही हमारी दृष्टि खोलती हैं, और हमें सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती हैं। उनसे हमें जो प्रेरणा मिलती है वह सांसारिक कामनाओं की वृद्धि के लिए नहीं, निष्कामता के लिए है, राग के लिए नहीं विराग के लिए है, सांसारिक लाभों को बढ़ाने के लिए नहीं घटाने के लिए है; लोभ के लिए नहीं, निर्लोभ के लिए है असन्तोष के लिए नहीं, सन्तोष के लिए है, प्रमाद के लिए नहीं अच्छाई में प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए है। उनकी पाषाण मूर्तियाँ भी यही उपदेश देती-सी प्रतीत होती हैं—पाप कर्म न करो। जो भी शुभ कर्म है उनका संचय करो। अपने चित्त को शुद्ध रखो। मानवता का मूल मंत्र है:—

अक्रोधेन जयेत क्रोधं असाधुम साधुना जयेत।
जयेत कदर्यं दानेन जयेत सत्येन चानृतम्॥

अर्थात् क्रोध को अक्रोध से जीतो और बुरे को भले से, कंजूस को दान से और असत्य को सत्य से जय करो।

बुद्ध भगवान् के हाथ में धनुष बाण नहीं, गदा और शंख भी नहीं है। तब भी वे अंगुलिमाल जैसे हिंसक पर भी विजय पा जाते हैं। उसे भी अपना अनुयायी बना लेते हैं। यही एक सच्ची विजय है। यह अहिंसा का बल है। अस्त्रों से विजय नहीं, नाश होता है। जितने ही घातक अस्त्र होते हैं उतना ही व्यापक नाश पृथ्वी पर बिछ जाता है। मनुष्य के पाप घृणा के योग्य होते हैं मनुष्य स्वयं नहीं। भगवान् बुद्ध की यही सम्यक् दृष्टि थी, जो उनके अप्रमेय बल और शक्ति के श्रोत थे। उनके हृदय में प्राणिमात्र के कल्याण की भावना ही उग्र थी। वह दया के हिमाद्रि थे, प्रेम के अपार पारावार। वे सांसारिक कल्मष से सर्वथा मुक्त थे। कोई देखे तो अपने हृदय को उन जैसा शुद्ध करके। जिस संसार को भयंकर भवसागर कहा गया है, वही सुख और आनन्द का सागर सा दृष्टिगोचर होगा। यह सम्यक् ज्ञान का ही अभाव है जिससे मनुष्य, मनुष्य का भयंकर शत्रु बना है, और एक दूसरे को लक्ष्य करके सर्वनाश का मार्ग बना रहा है। यदि मानव रचना में प्रकृति अति उदार न होती तो, मानव अपने ही अज्ञान से अपना कभी का सर्वनाश कर बैठा होता। परन्तु आज मनुष्य ने ऐसे अस्त्र भी तैयार कर लिये हैं, जो प्रकृति की उदारता को भी नष्ट कर देंगे।

इस परिस्थिति में आज हमें भगवान् बुद्ध के संदेश में ही कुछ ऐसा वैज्ञानिक सत्य दीख पड़ता है जो आज के सभ्य मानव का सार्वभौम कल्याण कर सकता है। उनका निर्वाण का सिद्धान्त हमें आकर्षित न करे, उनका संघ हमें आकर्षित न करे, परन्तु उनकी असीम मानवता तो हमें आकर्षित किये विना रह ही नहीं सकती। आज जब अणु अस्त्रों की शक्ति मनुष्य के हाथ लग गयी है, और किसी भी समय महा विनाशकारी युद्ध का विस्फोट हो सकता है, तब हमें भगवान् बुद्ध जैसे पथ-प्रदर्शक की आवश्यकता और भी अधिक प्रतीत होती है। आज भावी विनाश से यदि कोई बचा सकता है तो वह है भगवान् बुद्ध का पंचशील। यही भगवान् बुद्ध की अप्रमेय विजय है। आज संसार उनके सम्मुख नतमस्तक है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'शुश्रूषक-बुद्ध'

श्री बसन्तकुमार शाक्य

सहज करुणा से क्वणित
मन-मंजु वीणा-स्वर सधे
चल दिये भगवान्-भास्वर
आनन्द को निज साथ ले,
पेट की पीड़ा जिसे
व्याकुल, महा आकुल किये,
मल-मूत्र में लिपटी
सनी जहँ काय कंचन भिक्षु की ।
गर्भ में जिस काय को,
बुनते रहे,
रचते रहे,
शत स्वप्न कर पितु मातु के ।
काय जो
दुलराई गई हृद्धार-पालना,
सरि-सुधा-वात्सल्य
नहलाई गई दिन-रात छलना ।
और,
जिसने एक दिन
निज करों से मातु-पितु को
भव-उपेक्षा का गरल लाकर—
—पिलाया
छोड़ दी संसार की गलियारियाँ ।
आज,
वह मल-मूत्र का पिण्ड,
मल-मूत्र में लिपटा पड़ा
अनुभव रहा कर
देह की यात्रा जहाँ तक ?
देह, जो समवाय अब तक—
—पंच-स्कन्धों की सरल सी
और वे ही
छिन्न होते दृष्टि-प्रथ पर आ रहे ।

हाय ! यह कंचन वही
सिंचन बिना जिसकी कथा
रंच न ।
वंचित सुसेवा से हुआ वह
—भिक्षुओं की
घात पीड़ा के करों
एकाकी रहा सह
एकान्त कक्ष विहार के ।
शरेण्य दूत शान्ति के
कारुणिक वरेण्य पूत
परमप्रिय शिष्य आनन्द सँग
एकान्त कक्ष भिक्षु पास,
जा,
देखा उस आकुल को
पीड़ा-ग्रस्त
महा-त्रस्त
अस्त-व्यस्त
सहज ही कण्ठ से
करुणा उद्वेलित स्वर रिस चला—
"आयुष्मान ! कष्ट क्या ?"
"भन्ते ! पेट का"
"परिचारक नहीं कोई ?"
"कोई नहीं भन्ते !"
"कारण कह ।"
"पर-सेवा विरति मेरी"
शूल-सा आ पड़ा अन्तिम शब्द—
—कान में तथागत के
अकुशल वितर्क-ग्रस्त
—भिक्षु,
अभी तक विहार के,
साधना का शैल सा अभाव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

संघ वृक्ष दीख पड़ा उखटा सा
रस हीन
ऋतु-विहीन
ख-राग-रहित
निस्पन्द निपट।
खो गये पल-आध,
निस्साध,
अस्वाद।
"आनन्द ! पानी ला,
"नहलायेंगे भिक्षु को।"
तथागत थे ऐसे लोग
छोड़ते जलधार जैसे
करुणाकर जोड़ रहे करुण पीयूषधार,
निखिल मानवता पर संसृति की।
नहला, धुला, साफ कर
मंजी पर लिटा दिया।
पश्चात्,
एकत्रित कर भिक्षुओं को
उपदेशित, संतर्पित किया—
"भिक्षुओ ! माता है,
न पिता कोई,
परिवार की उष्मा से वंचित—
हैं सभी हम,
हम भिक्षु ही परिवार सब
करणीय हमको है परस्पर
समय-असमय
बन्धु सेवा।
करे न ऐसा'
दुष्कृति की आपत्ति उसे।
भिक्षुओं ! समझो नहीं
प्रतिक्रिया-युक्त
अवगुणों प्रति
मन हमारे आस्रव रहित हैं।
समझो मत
हम पथ पर हैं
जब तक हमारे मन
वैरी की पीड़ा को
करते नहीं अपनी सी अनुभव।
शोक, भिक्षुओ ! महाशोक !!
वरो, मानवता को,
हेरा, दानवता को,
धर्म और संघ यह
आश्रित है शील पर
तोड़ोगे शील यदि,
मानवता का प्रतीक संघ
ढह जायेगा,
इसलिये,
मन में करो भली भाँति
तोड़ोगे शील जो
इसमें भी दुष्कृति की आपत्ति है।''

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नालन्दा में खसर्पण अवलोकितेश्वर का मन्दिर

डॉ० चन्द्रिका सिंह उपासक एम० ए०, पी० एच० डी०

नालन्दा एक प्रमुख शिक्षा-केन्द्र तो था ही, साथ ही यहाँ अनेक पुण्य पूजा-स्थल भी थे। भगवान् के प्रधान शिष्य सारिपुत्र के जन्म-मृत्यु से पुनीत वह पुण्य कक्ष आज भी नालन्दा के खण्डहरों में विद्यमान् है जहाँ उन्होंने जन्म लिया था और जहाँ अन्त में आकर अपने नश्वर शरीर का त्याग किया था। उस पवित्र स्थल पर एक ऊँचा चैत्य खड़ा है। इस विशाल चैत्य के ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ हैं। इस सारिपुत्र-चैत्य के ऊपर जाकर प्राचीन नालन्दा विश्वविद्यालय के विहारों का विहंगावलोकन होता है। नालन्दा के खण्डहरों में एक ओर तो विहारों की पंक्तियाँ हैं, तो दूसरी तरफ ठीक सामने मन्दिर, चैत्य तथा पूजा-स्थल हैं। इस दूसरी कतार में उत्खनन से प्राप्त एक बहुत बड़े मन्दिर के अवशेष मिले हैं। इस मन्दिर की बनावट बहुत कुछ उसी ढंग की है जैसी कि हमें बोधगया के मन्दिर में मिलती है।

तुर्कों के आक्रमण ने इस विशाल बौद्ध शिक्षा-केन्द्र को सदा के लिए नष्ट कर डाला। इसके गगनचुम्बी विहार ढहा दिये गये, विशाल पुस्तकालय वर्वरों की आग में भस्म हो गये और यहाँ के दस सहस्त्र शिक्षार्थी एवं शिक्षक अधिकांश तलवार के घाट उतार दिये गये और शेष तिब्बत, नेपाल आदि स्थानों में छिपकर शरण लिये। फिर इसके साथ ही भारत से बौद्ध धर्म सदा के लिए उठ गया। जब 'संघ' ही नहीं, तो 'बुद्ध' और 'धर्म' की चर्चा कौन करे?

महामाया का स्वप्न

नालन्दा में तुर्कों का अन्तिम आक्रमण लगभग सन् १२३६ ई० में हुआ। अन्तिम तिब्बती विद्यार्थी धर्म-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वामिन् ने इस आक्रमण का आँखों देखा हाल लिखा है। उसने यहाँ के अन्तिम आचार्य राहुल श्री भद्र के साथ कई वर्ष बिताये थे। और अन्तिम समय में 'ज्ञाननाथ' के उस मन्दिर में छिपकर अपनी जान बचाई जो पहले ही तुर्कों द्वारा नष्ट-भ्रष्ट कर दिया गया था। हाल ही में प्रकाशित 'धर्मस्वामिन् की जीवनी' से इस आक्रमण का विशेष विवरण प्राप्त हुआ है।

धर्मस्वामिन् ने नालन्दा की बड़ी महिमा वर्णित की है। वह लिखता है कि नालन्दा में चार प्रमुख देव-मन्दिर थे। इन मन्दिरों के आराध्य-देव बड़े ही पूज्य माने जाते थे। ये देव थे; 'वक्रग्रीवा' मन्जुश्री, ज्ञाननाथ, 'आभूषणों रहित' तारा और भगवान् खसर्पण। नालन्दा के खण्डहरों में ये मन्दिर कहाँ थे, यह अभी तक ठीक-ठीक ज्ञात नहीं हो पाया है। ज्ञाननाथ का मन्दिर सम्भवतः नालन्दा से दक्षिण-पश्चिम जगदीश पुर स्थित वह स्थल है जहाँ आज भी भगवान् बुद्ध की एक विशाल प्रतिमा विराजमान है। वक्रग्रीवा मन्जुश्री और 'आभूषण रहित' तारा की मूर्तियाँ शायद बर्बर आक्रमणकारियों ने नष्ट कर डालीं। किन्तु खसर्पण अवलोकितेश्वर की एक सुन्दर प्रतिमा उत्खनन से मिली है जो पुरातत्व संग्रहालय में सुरक्षित है। यह निश्चित रूप से कहना तो अवश्य मुश्किल है कि यह वही मूर्ति है जिसका उल्लेख धर्मस्वामिन् ने किया है; किन्तु मूर्ति की सुन्दरता और सुघड़ता देखते ही बनती है और ऐसा लगता है कि कभी यह निश्चय ही अपना विशिष्ट महत्त्व रखती रही होगी।

महायान ग्रन्थों में अवलोकितेश्वर बोधिसत्व की बड़ी महिमा वर्णित है। इनके विषय में कहा जाता है कि वे ऐसे बोधिसत्व हैं जो गौतम बुद्ध और भावी बुद्ध 'मैत्रेय' के बीच के कल्प के शाशनकर्ता हैं। उनका प्रमुख उद्देश्य यही है कि संसार के जितने भी प्राणी इस कल्प में पैदा हुए हैं अथवा होंगे उन सबका कल्याण हो और सभी में 'बोधि' का संचार हो। महायान ग्रन्थ 'करण्ड व्यूह' में अवलोकितेश्वर वोधिसत्व का विस्तार से वर्णन है। अवकितेश्वर के सैकड़ों स्वरूप मिलते हैं। तिब्बत-नेपाल में इनके स्वरूपों के अनेक पट्ट चित्र एवं भित्ति चित्र अभी भी प्राप्य हैं। प्रायः १०८ स्वरूपों का वर्णन मिलता है। इनमें सबसे प्रमुख १५ हैं। इन पन्द्रह स्वरूपों में 'खसर्पण' अवलोकितेश्वर भी एक हैं। 'साधना माला' महायान का एक प्रसिद्ध तांत्रिक ग्रन्थ है उसमें इन पन्द्रह अवलोकितेश्वरों का ब्यौरेवार विवरण प्राप्त है। खसर्पण अवलोकितेश्वर के विषय में लिखा है कि—"वे ऐसे बोधिसत्व हैं जिनके शरीर से करोड़ों चन्दकिरणें प्रस्पुटित हो रही हैं। सिर पर जिनके जटा-जूट है। जिन्होंने अपने सिरपर 'अमिताभ' को बैठा रखा है और जो अर्ध-पर्यङ्क मुद्रा में चन्द्र पर विराजमान हैं। जिनकी मुख-मुद्रा सदा स्मित है। जो द्विरष्टवर्ष के हैं और जिनका दाहिना हाथ वरद् मुद्रा में है तथा बायें में कमलनाल सुशोभित है। जिनके हाथ से पियूषधारा प्रवाहित हो रही है, जिसके रासिक हैं। जिनके नीचे 'सूचिमुख' उर्ध्वमुख किये, पेट को दबाये, अत्यन्त कृश अति पीतवर्ण का हो खड़ा है? जिनका निवास-स्थान 'पोतल पर्वत' पर है। मुख-मुण्डल करुणा से स्निग्ध है। शृंगार रस से जो परिपूर्ण हैं। जो अतिशान्त और नाना लक्षणों से अलंकृत हैं। जिनके सामने 'तारा' है जिसका वर्ण श्याभ है। उसके (तारा के) दाहिने हाथ में कमल विकसित हो रहा है और बाँयें में नालयुक्त उत्पल है। वह भी अनेक आभूषणों से युक्त है। यौवनावस्था के कारण वह कुचभार से दबी जैसी है। वहीं 'सुधन कुमार' भी हाथ जोड़े हुए है। 'सुधनकुमार' काञ्चनद्युतिमय है तथा राजकुमार सदृश है। बाँयें काँख में वह पुस्तक दबाये हुए हैं। वह सभी अहंकारों से भी युक्त हैं। वहीं (खसर्पन के पास) बाँईं ओर सुवर्णमयी जटा सदृश केशोंवाली चतुर्भुज 'भृकुटी' भी है। उसके बायें हाथ में त्रिदण्ड हैं और दाहिने में कमण्डल। उसके एक हाथ में सूत्र है और बन्दना कर रही है। उसके तीन नेत्र हैं। वहीं 'हयग्रीव' लम्बोदर वौना भी है। उसका रंग रक्त जैसा है। उसके पीतवर्ण के केश ज्वाला सदृश ऊपर उठे हुए हैं। उसने शरीर में सूर्य का यज्ञोपवीत धारण कर रखा है। मुख मण्डल भूरी मूछों से सुपरिचित है। लाल लाल तिरछे त्रिनेत्र हैं तथा टेढ़ी भौंहे हैं। शरीर से व्याघ्रचर्म है और एक हाथ में दण्ड है। दाहिने हाथ से झुककर उनकी (खसर्पण की) वन्दना कर रहा है।"

खसर्पण अवलोकितेश्वर का जैसा वर्णन ऊपर 'साधन-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

माला' से प्राप्त है ठीक वैसी ही नालन्दा की मूर्ति है। यों कुछेक अन्य स्थानों से भी खसर्पण की मूर्तियाँ मिली हैं किन्तु नालन्दा की प्रतिमा अति सुन्दर है। विक्रमपुर, ढाका (पूर्वी पाकिस्तान) से भी एक काफी अच्छी मूर्ति मिली है। परन्तु वह मूर्ति नालन्दा जैसी सुन्दर नहीं है। ऐसा जान पड़ता है कि नालन्दा के उत्खनन से खसर्पण की जो प्रतिमा मिली है वही सम्भवतः उस मन्दिर की शोभा बढ़ाती थी जिसका वर्णन धर्मस्वामिन् ने किया है। सुघड़ता और अंग-प्रत्यंग के विन्यास एवं भाव-भंगी की दृष्टि से नालन्दा की यह मूर्ति दर्शनीय है।

महायान के इस अवलोकितेश्वर बोधिसत्व का नाम 'खसर्पण' क्यों पड़ा और उनकी मूर्ति की कल्पना कैसे विकसित हुई, यह बताना बड़ा ही कठिन है। 'खसर्पण' के शाब्दिक अर्थ से ऐसा जान पड़ता है कि वे ऐसे बोधिसत्व हैं जिन्हें वह सिद्धि प्राप्त है जिसके द्वारा वे आकाशगामी (ख + सर्पण) हैं। किन्तु बोधिसत्व के लिए ऐसी आध्यात्मशक्ति प्राप्त करना बहुत कठिन बात नहीं। खसर्पण अवलोकितेश्वर 'ध्यानी' बोधिसत्व हैं। क्या यह तात्पर्य तो नहीं उन्हें 'आकाशानाञ्चायतन' ध्यान तक सिद्धि प्राप्त हुई और जिस कारण उनका ऐसा नाम पड़ा? उनके स्वरूप पर ध्यान करने की ओर विशेष जोर दिया गया है। यही कारण है कि नालन्दा में जहाँ महायान सम्प्रदाय का विशेषरूप से विकास हुआ, खसर्पण अवलोकितेश्वर के मन्दिर का निर्माण हुआ था। आज इस अवलोकितेश्वर का मन्दिर नालन्दा के खण्डहरों में किस ओर है, यह ढूँढ़ निकालना पुरातत्वविदों का ही काम है।

शान्ति और एकता का मार्ग

श्री उपेन्द्रनाथ राय

विभाजन के १३ वर्षों बाद साम्प्रदायिकता के कड़वे फलों को चखने के बाद उम्मीद की जाती थी कि हमारे देश के हिन्दू और मुसलमान आँखें खोलेंगे, अनुभव से कुछ शिक्षा ग्रहण करेंगे और स्नेह-सद्भावपूर्वक रहना सीखेंगे। परन्तु हाल में कुछ घटनाओं से ऐसा संकेत मिला है कि देश में अभी ऐसे लोगों की कमी नहीं जो कि मनुष्यता से दूर हैं तथा असत् से सत् की ओर आने के लिए जरा भी इच्छुक नहीं हैं। इस दुरव्यवस्था ने सभी विचारशील जनों में चिन्ता उत्पन्न कर दी है और तरह-तरह के विचार इस सम्बन्ध में पेश किये जाने लगे हैं। भारत में नाना सम्प्रदायों का अस्तित्व कोई नई चीज नहीं है और इतिहास साक्षी है कि बौद्धयुग में ये सभी शान्तिपूर्वक रहते थे। यह कैसे सम्भव हो सका था, इसी पर यहाँ विचार करना है क्योंकि पिछले अनुभव आज हमारे काम आ सकते हैं।

सर्वप्रथम यह जान लेना जरूरी है कि जिन्हें हम हिन्दू कहते हैं, वे किसी एक जाति या धर्म के लोग नहीं हैं। व्यापक अर्थ में 'हिन्दू' के अन्तर्गत बौद्ध, जैन् और चार्वाक भी आ जाते हैं। लम्बे अरसे तक साथ रहने और साथ-साथ विदेशी आक्रमणों के प्रतिरोध करने के कारण ही विभिन्न धार्मिक विश्वासों के लोग आज एक ही हिन्दू समाज के अंग बन गये हैं अन्यथा उनमें काफी मतभेद ही नहीं थे बल्कि ऐसे भी समय आये हैं जब शशांक और पुष्यमित्र जैसे राजाओं ने श्रमणों पर भारी अत्याचार किये हैं या शैवों ने वैष्णवों का खून बहाया है। ऐसी स्थिति में भी भारत में भी वैसा कभी नहीं हुआ जैसा कि अन्यत्र इस्लाम या ईसाई धर्म के नाम पर हुआ है।

इसका मुख्य कारण हमारी सहिष्णुता रही है। ईश्वर है या नहीं, एक है या दो-तीन, वह पाँचवें आस्मान में रहता है या सातवें, जैसे प्रश्न अन्यत्र महत्त्वपूर्ण समझे जाते थे। उनके बारे में थोड़ा-सा मतभेद सहन नहीं किया जा सकता था। इसीलिए मुसलमानों और ईसाइयों में तमाम पन्थ फूटे, और उनमें से जहाँ जो बलशाली हुआ उसने दूसरे पन्थ के लोगों को जिन्दा जलाया, कत्ल किया, खाल खिंचाली या सूली पर लटका दिया। भारत में कर्मफल को और परलोक को न मानना ही गर्हित

४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बताया गया, ईश्वर या धर्मग्रन्थ पर विश्वास के लिए इतना जोर नहीं दिया गया। आडम्बर नहीं नैतिकता महत्त्वपूर्ण है यही श्रमणों का उपदेश है और इस उपदेश ने अनावश्यक कटुता को दूर करने में काफी मदद दी। हम चाहें तो आज भी इससे लाभ उठा सकते हैं।

सहिष्णुता के कारण ही एक मत को माननेवाले दूसरे मत के देवी-देवताओं या पूज्य स्थलों का तिरस्कार नहीं करते थे। जो जिस मत को नहीं मानता था वह अधिक से-अधिक उसके देवता, उसके तीर्थ से दूर रहता, परन्तु उसे नष्ट-भ्रष्ट करने की स्वप्न में भी न सोचता। बौद्धों ने तो बुद्ध के सिवा तमाम स्थानीय देवी-देवताओं की पूजा को इसलिए अपने में समेट लिया कि अनावश्यक विवाद–'मेरा देवता, तेरा देवता' यह तू-तू, मैं-मैं न हो। मुसलमानों और हिन्दुओं में आज यह समझ आ जाय तो मन्दिर-मस्जिद के तमाम झगड़े खतम हो सकते हैं।

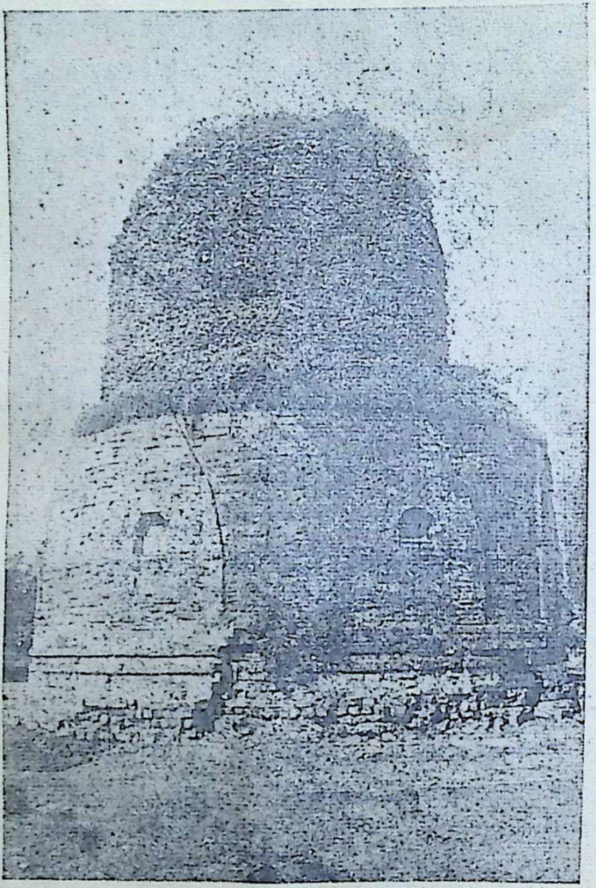

सारनाथ का धम्मेक स्तूप

आज जो साम्प्रदायिक झगड़े पैदा होते हैं उनकी जड़ में लोभ, द्वेष और मोह की भावनाएँ ही रहती हैं। भगवान् बुद्ध ने कालामों को दिये गये अपने सुप्रसिद्ध उपदेश में कहा है कि लोभ, द्वेष और मोह से दूषित बुद्धि सत्य का, धर्म का निर्णय नहीं कर सकती। इसका प्रमाण हमारे सामने है। पाकिस्तान में हिन्दुओं पर कुछ मुसलमानों ने अत्याचार किया तो उसका बदला भारत में मुसलमानों से लेने की बातें की जाती हैं जब कि उनकी गलती नहीं (अगर मुसलमान होना ही कोई गलती हो तो बात दूसरी है)! इसी प्रकार की भावना मूलतः गलत है। बदले की भावना जैसा कि बुद्ध ने कहा है किसी समस्या का हल नहीं कर सकती और जब बिलकुल निर्दोष व्यक्तियों से 'बदला' लेने की बात कही जाती है तो बुद्धि को लोग तिलाञ्जलि ही दे बैठते हैं।

यह कहा जाता है कि मुसलमानों में गैर-मुसलमानों के प्रति स्वाभाविक दुर्भावना है। इसी प्रकार के आरोप एक सम्प्रदाय के लोग दूसरे सम्प्रदाय पर लगा सकते हैं, लगाते भी हैं। इससे समस्याएँ उलझती हैं, सुलझती नहीं। आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक पंथ के लोग एक दूसरे को बुरा या दोषी ठहराने की कोशिश छोड़ एक दूसरे को समझाने की कोशिश करें जैसा कि श्रमण संस्कृति का आदर्श रहा है। जब इस प्रकार का विचार किया जायगा तो मालूम होगा कि जो संख्या में थोड़े होते हैं, उनमें भय, आशंका और अविश्वास के भाव हों यह स्वभाविक हैं और यदि इनके साथ धार्मिक उन्माद भी मिल जाय तो कोई भी अनर्थ हो सकता है। अतः

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

समझदार व्यक्तियों का कर्तव्य होता है कि भय, अविश्वास और आशङ्का के वातावरण को दूर करने की कोशिश करें। ईसाइयों और मुसलमानों के मत से हमारा कितना भी सैद्धान्तिक विरोध क्यों न हो, हमें ईसाइयों और मुसलमानों सभी के प्रति समान रूप से सद्भाव रखना चाहिए क्योंकि हमारी संस्कृति कहती है—मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।

एतदर्थ हमें वास्तविक अर्थ में अहिंसक बनना है। अहिंसा का आज प्रायः गलत अर्थ लगाया जाता है। अहिंसावादिता के नाम पर आज हम यह मजाक देख रहे हैं कि दूसरों की मेहनत की कमाई हड़पने में लगे अर्थ-पिशाच भूखों मरनेवालों को त्याग का उपदेश देते है, मुँह का कौर छीन लिया जाता है और उस पर 'हाय' करनेवाला हिंसावादी कहलाता है। यह हिंसा ही है, अहिंसा नहीं। अहिंसावादी समाज को देता अधिक है, लेता कम है। अहिंसक अपने से ही अधिक माँग करता है, दूसरों से नहीं। हम अहिंसक हैं यह हमारा दावा तभी तक सही माना जायगा जब तक कि हमारे आचरण से किसी का अहित नहीं होता और यह दावा किसी विशेष अधिकार या सुविधा की प्राप्तिमात्र के लिए नहीं होता जिसके पूर्ण न होने पर हम मनमानी करें। अतः अहिंसक बनने का अर्थ यह है कि दूसरे सम्प्रदाय के लोग चाहे जान-बूझकर हो चाहे बिना जाने यदि हिंसा में रत होते हैं तो हम उनकी तरह अविवेक में नहीं पड़ेंगे। क्योंकि हमारे शास्त्र ने बहुत बड़े अनुभव की बात कही है—"अक्रोध से क्रोध को जीतो, कृपणता को उदारता से जीतो और असत्य को सत्य से जीतो।"

'असत्य को सत्य से जीतो' सुनने में कितनी साधारण सी बात है और कितनों की दृष्टि में अव्यावहारिक भी! लेकिन मैं पाठकों को विश्वास दिलाता हूँ कि यदि असत्य को छोड़ सत्य का आश्रय लेना हमारे बहुत से पत्रों को और हिन्दुओं तथा मुसलमानों के तथाकथित हितकामी नेताओं को आ जाय तो बड़े-बड़े अनर्थ बच जाँय। अभी कुछ दिन पूर्व मैं गोरखपुर गया था। वहाँ साम्प्रदायिक दंगे उभाड़ने के कई असफल प्रयास हो चुके हैं। उन दिनों कोई हिन्दू दुकानदार अपने भाई समेत व्यक्तिगत झगड़े के कारण किसी मुसलमान द्वारा घायल कर दिया गया था। असत्य का नमूना देखिये कि एक ओर हिन्दुओं में इस घटना को लेकर उत्तेजना फैलाने की कोशिश चली, दूसरी ओर मुसलमानों को भड़काने के लिए यह प्रचार करने का यत्न हुआ कि आहत व्यक्ति मुसलमान है। पुलिस की सतर्कता से कोई दुर्घटना नहीं घटी, लेकिन यदि अफवाहों को रोका न जाता तो गड़बड़ी फैल सकती थी। बहुत से दंगे कहीं मन्दिर ध्वस्त किये जाने, कहीं मस्जिद जलाये जाने आदि की गलत अफवाहों से ही उठ खड़े होते हैं। थोड़ा-सा अतिरंजन, थोड़ा-सा असत्य बहुत से प्राणों का नाश कर सकता है यह हर व्यक्ति को समझ लेना है।

सबसे बड़ी बात यह है कि आज हम नैतिकता की भावना को खो बैठे हैं, धर्म के नाम पर हम झगड़ा करना ही जानते हैं। जहाँ नैतिकता की भावना होगी वहाँ हम जिस प्रकार अपनी माँ-बहनों का सम्मान करते हैं, उसी प्रकार दूसरों की माँ-बहनों को भी समझेंगे। हमारी सभ्यता कहती है।

मातृवत्परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत्सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति॥

लेकिन कितने हिन्दू या मुसलमान ऐसे हैं जो इस पर आचरण करते हैं? यदि सभी इस पर आचरण करने लगें तो कितनी ही अप्रिय घटनाएँ हों ही न। परन्तु नहीं, देश में ऐसे पन्थ हैं जो समझते हैं कि भुलावे में डालकर, बहका-फुसलाकर, या जबर्दस्ती किसी को अपने मत में ला देते हैं तो हमारी संख्या बढ़ जायगी और यह हमारे धर्म के लिए एक विजय होगी। ऐसे धार्मिक उन्मत्तों की कमी नहीं जो कि शिशु अपहरण, नारी अपहरण और बलात्कार जैसे कुकृत्यों की सराहना करते हैं कि इससे उनके धर्म की 'श्रीवृद्धि' होगी। यह नैतिक अधःपतन की चरम सीमा है! परन्तु ऐसे लोग भूल जाते हैं कि प्रत्येक क्रिया प्रतिक्रिया को जन्म देती है, आक्रमण का फल प्रत्याक्रमण होता है। धर्म की श्रीवृद्धि गुण्डे और बलात्कारी नहीं करते बल्कि धर्म के वास्तविक प्रचारक त्याग और तपस्या का जीवन बितानेवाले महापुरुष हुआ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

करते हैं जो नैतिकता के उच्च आदर्श रखते हैं, सच्ची विजय नैतिकता पर निर्भर है पशुता पर नहीं।

इस तत्त्व को जो जानते हैं उनके लिए एक ही क्षेत्र प्रतिस्पर्द्धा के लिए रह जाता है, बाकी सारी होड़ समाप्त हो जाती है। वह क्षेत्र है नैतिकता का। देश के हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई सभी समाजों के लोग नैतिक गुणों में होड़ लगावें और एक दूसरे से आगे बढ़ जाने की कोशिश करें तो शान्ति और एकता का सुन्दर मार्ग स्वतः प्रशस्त हो जायगी। भगवान् सम्मासम्बुद्ध की इस पुण्य जयन्ती के अवसर पर मैं आशा करता हूँ कि देशवासी श्रमण संस्कृति के पूर्वोक्त उज्ज्वल आदर्श से प्रेरणा ग्रहण करेंगे।

बोधिसत्व

श्री भीमराव लोन्हारकर

जागो गौतम ! जागो महान् !
जागो अतीत के क्रांति गान।
वट के नीचे खड़ी खोजती, लिये सुजाता खीर तुम्हें।
बोधि वृक्ष-तल बुला रहे कलरव में कोकिल-कीर तुम्हें॥
शस्त्र भार से विकल खोजती रह-रह धरा अधीर तुम्हें।
प्रभो ! पुकार रही व्याकुल मानवता की जंजीर तुम्हें॥
आज दीनता को प्रभु की पूजा का भी अधिकार नहीं।
देव बना था क्या दुखियों के लिए निठुर संसार नहीं॥
धन-पिशाच की विजय, धर्म की पावन ज्योति अदृश्य हुई।
दौड़ो बोधिसत्व ! भारत में मानवता अस्पृश्य हुई॥

× × ×

धूप-दीप, आरती, कुसुम ले, भक्त प्रेम वश आते हैं।
मन्दिर का पट बन्द देख जय कह निराश फिर जाते हैं॥
सबरी के जूठे बैरों से आज राम को प्रेम नहीं।
मेवा छोड़ शाक खाने का याद पुरातन नेम नहीं॥
अनाचार की तीव्र आँच में अपमानित अकुलाते हैं।
जागो बोधिसत्व ! जगती के त्रसित अछूत बुलाते हैं॥
जागो विप्लव के वाक् ! दंभियों के इन अत्याचारों से।
जागो हे, जागो, तप-निधान ! दलितों के हाहाकारों से॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भगवान् बुद्ध की शिक्षा और मानसिक चिकित्सा

श्री लालजीराम शुक्ल, एम० ए०, बी० टी०

भगवान् बुद्ध का कथन है कि 'जिस प्रकार बैल के खुरों के निशान के पीछे रथ के पहिये के निशान होते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक बुरे काम का परिणाम दुखद अवश्य ही होता है। भगवान् बुद्ध की यह शिक्षा मनुष्य को जीवन में सावधान रहने के लिए पर्याप्त है। मनुष्य दैहिक सुखों में लिप्त होकर अपने मन को दुर्बल बना लेता है। जब मन सुख की लालसा से दुर्बल हो जाता है, तो उसके मन में अनायास ही अभद्र कल्पनायें उठती हैं। इन कल्पनाओं को रोकने की वह जितनी ही चेष्टा करता है, वे उतनी ही प्रबल होती जाती हैं और फिर मनुष्य को अनेक प्रकार के मानसिक और शारीरिक रोग हो जाते हैं तथा जीवन में दुर्घटनायें घटित होती हैं। सभी प्रकार के दुःखों का कारण सुख की अत्यन्त बढ़ी हुई लिप्सा होती है और सभी प्रकार की शान्ति सुख की लिप्सा से मुक्त लेने से ही उत्पन्न होती है।

भगवान् बुद्ध ने मनुष्य को स्वस्थ रहने का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मार्ग अपने आर्य अष्टांगिक मार्ग में बताया है। भगवान् बुद्ध का धर्म मनुष्य को आरोग्यवान् बनाये रखने की अचूक औषधि है। स्वस्थ मनुष्य वही होता है, जो स्वावलम्बी होता है; परावलम्बी व्यक्ति न तो कभी सुखी रह सकता है और न स्वस्थ। भगवान् बुद्ध के धर्म का एकमात्र आधार अपने मन की शुद्धि है। इसमें किसी देवी-देवता अथवा ईश्वरोपासना के लिये स्थान नहीं है। जिस प्रकार भूत-प्रेत आदि की सृष्टि दुर्बल-मनसे होती है, उसी प्रकार देवी-देवताओं की सृष्टि भी अपने आप को पहचानने का प्रयत्न न करने वाले व्यक्तियों की है। इन बातों में विश्वस करने वाले व्यक्ति सुगम पथ गामी होते हैं। थोड़े से ही प्रयास से वे अपनी मानसिक जटिलता से मुक्त होना चाहते हैं। मनुष्य किसी प्रकार के कष्ट से बचने के लिए ही अपने से बड़े का सहारा पकड़ता है। जो बात वह भौतिक जीवन में करता है, वही जब आध्यात्मिक जीवन में करने लगता है, तब अनेक प्रकार के देवी-देवताओं की कल्पना पैदा होती है। परन्तु मनुष्य का मन जब तक पक्का नहीं हो जाता, वह किसी भी देवता की कितनी भी अराधना क्यों न करे, जीवन में सुखी नहीं रह सकता। मन को पक्का बनाने का एकमात्र उपाय त्याग है। भगवान् बुद्ध का धर्म त्यागमय धर्म है। भगवान् बुद्ध का कथन है कि जिस प्रकार समुद्र का पानी चाहे कहीं से भी क्यों न लिया जाय, वह खारा ही होता है, उसी प्रकार भगवान् बुद्ध के बताये हुये धर्म की परख चाहे जिस तरफ से की जाय, वह त्यागमग ही निकलेगा।

मानसिक रोगों की चिकित्सा में देखा गया है कि ये रोग धर्म-पथ से विचलित होने के कारण ही उत्पन्न होते हैं। मनुष्य भावावेश में आकर अनेक प्रकार का दुराचरण कर बैठता है वह दूसरों का धन चुराता है, उनकी हत्या करता है, उनका अपमान करता है, वह व्यभिचार में पड़ता है। और अनेक प्रकार मादक पदार्थों का सेवन करता है। इस प्रकार के अनैतिक आचरण के परिणाम स्वरूप उसे मानसिक रोग होते हैं। किसी प्रकार का दुराचरण न तो समाज बर्दाश्त करता है और न मनुष्य की अन्तरात्मा ही। दुराचरण के लिए समाज दुराचारी व्यक्ति को राज दे देता है और मनुष्य की अन्तरात्मा उसे मानसिक और शारीरिक रोगों-द्वारा दंडित करती है।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज में सदा सम्मानित रहना चाहता है। अतएव वह अपने बुरे कामों को समाज से छिपाता है। जिस मनुष्य का नैतिक स्वत्व उसे कोसने लगता है, उसका जीवन ही उसे भाररूप हो जाता है। जिस प्रकार मनुष्य समाज में अपना सम्मान बनाये रखने के लिए अपने बुरे कामों को समाज के लोगों से छिपाता है, उसी प्रकार वह अपने बुरे कामों को अपने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मन का सम्मान न खोने के विचार से स्वयं से छिपाता है। परन्तु इस काम में वह बहुत देर तक सफल नहीं होता। स्वयं के गुण-दोष मनुष्य की इच्छा के प्रतिकूल भी समाज को ज्ञात हो जाते हैं। इसी प्रकार वे अपने काम से भी छिपे नहीं रहते। मनुष्य के मानसिक और शारीरिक रोग उसकी ऐसी प्रवृत्तियों को प्रकट कर देते हैं जो स्वयं की नजरों से छिपी हुई हैं और जिनकी आत्म-स्वीकृति करना मनुष्य के लिए अत्यन्त कठिन है। यदि किसी मनुष्य ने बहुत ही निन्दनीय कार्य किया है, तो उसे अकारण ही दण्ड प्राप्त करने का भय उत्पन्न हो जाता है। उसे डर हो जाता है कि कहीं उसके हृदय की गति न बन्द हो जाये, उसे कोई शत्रु न मार डाले, उसे कोढ़ न हो जाय अथवा उसका कोई नजदीक का सम्बन्धी न मर जाय। इन विचारों से त्रस्त होकर मनुष्य कभी-कभी आत्महत्या तक कर डालता है। मनुष्य के दमित गन्दे भाव गन्दे रोग उत्पन्न करते हैं। किसी भी कुविचार को मन में देर तक रखने से मनुष्य को जटिल शारीरिक रोग उसकी ऐसी प्रवृत्तियों को प्रकट कर देते हैं जो स्वयं की नजरों से छिपी हुई हैं और जिनकी आत्मस्वीकृति करना मनुष्य के लिए अत्यन्त कठिन है।

आधुनिक मनोविज्ञान ने इस प्रकार के रोगों से मुक्त होने का एक अचूक उपाय मानसिक रेचन बताया है। भगवान् बुद्ध ने भी अपनी धर्म शिक्षा में इसी उपाय पर विशेष जोर दिया है। भगवान् बुद्ध का कथन है कि मनुष्य को छिपा हुआ पाप ही लगता है, खुला हुआ पाप नहीं लगता। पाप को प्रकट कर देने से वह निस्तेज हो जाता है। पाप के प्रकट होने से मनुष्य को लौकिक क्षति अवश्य होती है। परन्तु इससे उसका आध्यात्मिक लाभ होता है। उसका झूठा महानता का अभिमान नष्ट हो जाता है। झूठी महानता की भावना भी मनुष्य के मन में अन्तर्द्वन्द्व की स्थिति उत्पन्न करती है। झूठी महानता के कारण मनुष्य का मन विभाजित हो जाता है। उसके मन में एक ओर अनेक प्रकार की अनैतिक वासनाएँ छिपी रहती हैं और दूसरी ओर वह अपने ऊपर महात्मागिरी का व्यर्थ ढोंग लादे फिरता है। जिस व्यक्ति का मन इस प्रकार स्वयं में विभाजित रहता है, उसका जीवन सदा दुखमय रहता है और उसका अन्त भी दुःख में ही होता है। यदि मनुष्य इस झूठे ढोंग से मुक्त हो जाय, तो वह सभी प्रकार के मानसिक रोग से मुक्त होजायगा। फिर उसका जीवन नैतिक स्तर में कुछ नीचा अवश्य रहेगा परन्तु वह स्वस्थ रहेगा। स्वस्थ मनुष्य ही अपनी नैतिकता को धीरे-धीरे ऊँचा उठा सकता है।

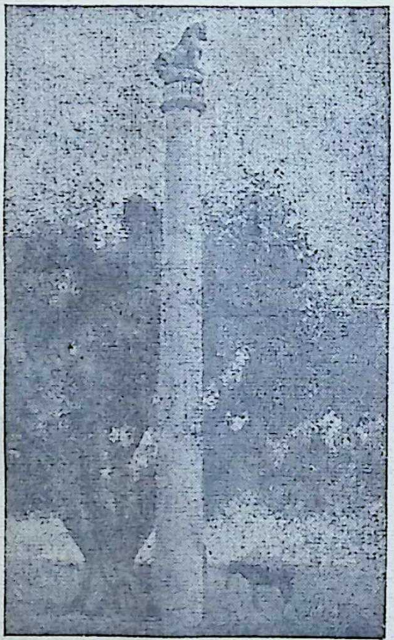

रमपुरवा जिला चम्पारन का
अशोक स्तम्भ

मानसिक चिकित्सा में रोगी से उसके जीवन की सभी ऐसी घटनायें लिखायी जाती हैं अथवा कहलायी जाती हैं, जो उसके लिए लज्जास्पद हैं। इन घटनाओं का वर्णन करते-करते मनुष्य का रोग नष्ट हो जाता है, पहले-पहल रोगी को इस प्रकार की आत्म-ग्लानि पूर्ण बातें याद ही नहीं आतीं, परन्तु जैसे-जैसे रोगी का चिकित्सक से आत्म-भाव बढ़ता जाता है, उसे अनेक घटनायें याद आने लगती हैं और वह स्वतन्त्रता पूर्वक उनकी आत्मस्वीकृति भी चिकित्सक के समक्ष करता है। इस प्रकार की आत्म-स्वीकृति उसके जीवन का नव-निर्माण कर डालती है।

भगवान् बुद्ध ने समाधि-लाभ के लिए मैत्रीभावना और आनापान के अभ्यासों की बड़ी महत्ता बताई है। मैत्री-भावना का अर्थ है कि मनुष्य अपनी परिस्थिति को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और आस-पास के लोगों को अपने आप के लिए कल्याणकारी समझे। इस प्रकार के समझने के प्रयास से मनुष्य का मन बहुत ही बलवान बन जाता है। तब उसके शत्रु उसके मित्र बन जाते हैं और उसकी प्रतिकूल स्थितियाँ अनुकूल में परिणत हो जाती हैं। जिस मनुष्य ने अमैत्री भावना का अभ्यास किया है वह अपने आप को सदा दुःखी बनाये रखता है। उसे अपने मित्र भी शत्रु के रूप में दिखाई देने लगते हैं। अमैत्री-भावना में अभ्यस्त व्यक्ति स्वयं का शत्रु होता है और जो व्यक्ति स्वयं का शत्रु है उसका संसार में मित्र कौन हो सकता है। यदि ऐसे व्यक्ति को समाज तंग न भी करे तो वह भूत-प्रेतों की कल्पना करके तंग होता है। मैत्री भावना का अभ्यास इस प्रकार की मनोस्थिति का परिवर्तन कर देती है।

मैत्री-भावना का प्रभाव दूसरे व्यक्ति के हृदय पर कैसा पड़ता है यह भगवान् बुद्ध की जीवन घटनाओं में प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है। अंगुलिमाल भगवान् बुद्ध को फरसे से मारने के लिए दौड़ा था। भगवान् बुद्ध ने उसे मैत्री-भावना की मुद्रा में आकर अपने हाथ को दिखा कर शान्त किया। वह रातभर दौड़ता रहा परन्तु पाँच हाथ जमीन पार न कर पाया। सबेरा होते-होते वह एक डाकू से संत में परिणत हो गया। मैत्री-भावना के अभ्यास से अनेक मानसिक रोगी इसी प्रकार से अपनी दीनता, क्रूरता और विषय-लिप्सा को छोड़ संत-महात्मा बन जाते हैं। इन रोगियों से यह अभ्यास आध्यात्मिक स्पर्श के द्वारा कराया जाता है। भगवान बुद्धकी समीपता में वह प्रताप था कि जिससे मनुष्य एक दानव अथवा पिशाच से मानव अथवा देव बन जाता था।

आनापान सति का अभ्यास अपने मन को दृढ़ बनाने की अचूक औषधि है। इस अभ्यास को कोई भी व्यक्ति सरलता से कर सकता है। यह अभ्यास बड़ा ही सरल है और मन को सरल बनाने का सर्वोत्तम उपाय है। इसकी सरलता ही वास्तव में इसकी सबसे बड़ी कठिनाई है। अनापान सति के अभ्यास में मनुष्य चिन्तन-हीन हो जाने की चेष्टा करता है। यदि कोई व्यक्ति इस अभ्यास को पूर्णरूपेण जागरूक होकर करे, तो उसे समाधि-लाभ हो और यदि वह अपने सभी अंगों को ढीला करके लेट कर करे, तो उसे सहज निद्रा प्राप्त होती है। इस निद्रा में यह बल है कि मनुष्य के कठिन-से-कठिन रोग थोड़े ही समय में समाप्त हो जाते हैं। यह मनुष्य को परावलंबन से मुक्त करके स्वावलम्बी बना लेती है। डा० विलियम ब्राउन ने इस प्रकार के अभ्यास के द्वारा हजारों मानसिक रोगियों को उनकी जटिल आदतों से मुक्त किया। आज से बीस वर्ष पूर्व से हम भी अपनी प्रयोगशाला में इस प्रणाली का मानसिक रोगों से रोगियों को मुक्त करने के लिए उपयोग कर रहे हैं। इसकी सहायता से हमने अकारण भय और चिन्ता, हृदय के रोग, पेट के रोग, सिर की पीड़ा, प्रेत-बाधायें तथा अनेक दूसरे प्रकार की बुरी आदत से स्वयं को मुक्त करने के लिए यह प्रणाली अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई है।

जैसे-जैसे सभ्यता का विकास होता जा रहा है, रोगों की भी वृद्धि होती जा रही है। इसका कारण यह है कि मनुष्य सभ्यता के द्वारा सच्चे अर्थ में धार्मिक नहीं बनता। वह झूठा, ढोंगी अथवा अभिमानी बनता है। विषय-लोलुपता के और दूसरों को त्रास देने के भाव उसमें बढ़ते हैं। मानसिक रोग इस प्रकार के अभद्र भावों का रेचन करते हैं; अतएव ये इनकी औषधि हैं। यदि मनुष्य धर्म की उपयोगिता पहचान ले तब वह सच्चे अर्थ में सभ्य बने; फिर उसे ऐसे मानसिक रोग न होवें, जो मनुष्य को सदा दुःखी बनाये रखते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वास्तविक मंगल क्या है ?

श्री अनन्तरामचन्द्र कुलकर्णी

अभी तक हमने देखा है कि मनुष्य को अपनी जीविका प्रामाणिक साधनों से प्राप्त करनी चाहिये। उसको अपने माता-पिता, पुत्र तथा स्त्री का पालन करना चाहिये। उसका कर्म निष्काम होना चाहिये। निष्काम कर्म के लिए मनुष्य को कर्म के फल की आशा छोड़नी चाहिये। अच्छा कर्म वह केवल अच्छा है इस भावना से जब मनुष्य करता है तब ऐसे कर्म को निष्काम कर्म कहते हैं। आगे आनेवाली गाथाओं में भगवान् बुद्ध धीरे-धीरे हमें निष्काम कर्म की ओर ले जाते हैं। अब हम पाँचवीं गाथा की व्याख्या करेंगे:—

दानं च धम्मचरियाच ञातकानञ्च संगहो।
अनवज्जानि कम्मानि एतं मंगलमुत्तमं॥

अर्थ—दान देना, धर्मानुसार आचरण करना, अपने रिश्तेदारों को मिलाकर रखना और दोषरहित कर्म करना यह सर्वोत्तम मंगल है।

जीवन रूपी नाव हल्की करने के लिए दान एक महान् साधन है। नाव यदि हल्की रहेगी, तो वह आसानी से पार जा सकती है। नाव यदि जड़ या भारी पदार्थों से भरी रहेगी तो उसके डूबने की सम्भावना रहती है। वैसे ही नाव के भीतर यदि पानी घुस जाय तो भी वह डूब जायेगी। नाव तो पानी में ही रहनी चाहिये परन्तु पानी उसके भीतर न जाने पाये, ऐसी सतर्कता हमें रखनी चाहिये। संसार में हम अवश्य रहें परन्तु संसार को हमें अपने भीतर नहीं लाना चाहिये। इसीलिए भगवान् बुद्ध कहते हैं—

सिञ्च भिक्खु इदं नावं सित्ता ते लहुमेस्सति।
छेत्वा रागंच दोसंच ततो निब्बाणं एहिसी॥

दान दो तरह का होता है। एक वस्तु का दान और दूसरा विद्या का दान। वस्तु का दान अर्थात् ऐहिक चीजों का दान जैसे अन्न, वस्त्र, घर आदि वस्तुओं का दान। विद्या दो प्रकार की होती है। एक विद्या ऐहिक वस्तुओं का ज्ञान करा देनेवाली होती है जिसे अपराविद्या भी कहते हैं। दूसरी विद्या मोक्ष दिलानेवाली जिसे परा भी कहते हैं। परा याने दूसरे किनारे पर ले जानेवाली विद्या। पर तीर पर जैसे हम नाव द्वारा जा सकते हैं वैसे ही धर्म द्वारा हम मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए धर्म का दान सर्वश्रेष्ठ दान माना जाता है। धम्मपद में भगवान् बुद्ध कहते हैं "सब्बदानं धम्मदानं जिनाति।" ऐहिक वस्तुओं के दान से मनुष्य अपनी जीवन-नौका हल्की करता है और नौका हल्की होने पर वह पर तीर पर जा सकता है। खुद पर तीर पर जाने पर वह मनुष्य दूसरों को भी पर तीरपर जाने का रास्ता दिखा सकता है। यह रास्ता दिखाना ही धर्मदान है। जो मनुष्य स्वयं धर्म से चलता है वही धर्मदान कर सकता है। जिसका जीवन धर्ममय बना है वही धर्म का प्रचार कर सकता है। इसीलिए बुद्ध कहते हैं 'यो धम्मं पस्सति सो मं पस्सति।' लोगों की धर्म की कल्पना विपरीत सी हो गयी है। मन्दिर में जाना और देवता को नमस्कार करना और उसे फूल और गन्ध अर्पण करना इसी को धर्म का लक्षण माना जाता है। वास्तव में धर्म तो चित्त-शुद्धि का एकमेव साधन है अतः वह आचरण की बात है। परम्परा शुष्कतर्क, सिद्धान्त और आडम्बर ये धर्म के अंग नहीं है। इसलिए भगवान् बुद्ध कहते हैं—

"कुल्लूपमं वो भिक्खवे धम्मं देसिस्सामि,
नित्थरणत्थाय नो गहणत्थाय"।

इसका अर्थ है—हे भिक्षुओ ! मैं तुम्हें नाव की तरह धर्म उपयोग के लिए देता हूँ न कि पकड़ने के लिए। अब दूसरा प्रश्न यह उपस्थित होता है कि धर्मानुसार आचरण करना याने क्या करना ? बुरी बातें न करना और अच्छी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बातें करना ही धर्मानुसार आचरण है। इसलिए हमें प्रथम बुरा क्या है जानने के लिए सदैव सतर्क रहना चाहिये। जिन बातों से हमारा तथा हमारे समाज का कल्याण होता है वह बात अच्छी है ऐसा मानना चाहिये। जिन बातों से हमारा तथा हमारे समाज का अनहित होता है उन्हें बुरी समझना चाहिये। धर्माचरण के लिए हमें सर्वप्रथम अपने शील पर जोर देना चाहिये। शील सुधारने के लिए हमें पंचशील का पालन करना चाहिये। पंचशील सिद्धान्त की बात नहीं है। वह तो एक प्रत्यक्ष आचरण की बात है। पंचशील यह है।

(१) मैं प्राणि हिंसा से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ।

(२) मैं चोरी से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ।

(३) मैं परस्त्री गमन से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ।

(४) मैं झूठ से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ।

(५) मैं शराब आदि मादक द्रव्यों के सेवन से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ।

बुद्धगया का सुप्रसिद्ध महाबोधि मन्दिर

मनुष्य यदि अंशतः भी पंचशील का प्रामाणिकता से पालन करने का प्रयत्न करेगा तो वह अपने को सुखी बना सकता है। क्योंकि महत्त्व की बात तो यह है कि सही रास्ता कौन-सा है और बेरास्ता कौन-सा है यह पहचानना बहुत कठिन बात है। क्योंकि हिंसा के रास्ते से ही मनुष्य का कल्याण होता है ऐसा माननेवाले और उसका प्रचार करनेवाले लोग इस दुनिया में कम नहीं हैं। यही तो धर्म और अधर्म का महान् संघर्ष है। अधर्म भी धर्म की पताका हाथ में लेकर अपना प्रचार करता है। अधर्मी लोगों का सबसे बड़ा हथियार ईश्वर है। और ईश्वर के नाम पर ये लोग अधर्म का प्रचार बहुत कुशलता से करते हैं। ये लोग कहते हैं कि ईश्वर की भक्ति करो। जिस ईश्वर को किसी ने देखा नहीं उस ईश्वर की भक्ति कैसी होती है। ईश्वर तो एक पद है वह पुरुष नहीं है। हाँ, जिस पुरुष को यह पद प्राप्त होता है उसे ईश्वर कहे तो इस दृष्टि से ईश्वर याने ज्ञानी पुरुष ऐसा हम कह सकते हैं। सूर्य और उसके प्रकाश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

की तरह ज्ञान और ज्ञानी पुरुष एक दूसरे से भिन्न नहीं हैं। ईश्वर यदि एक पद है तो उसकी भक्ति कैसी होगी ? मानो एक मनुष्य को नदी के दूसरे तीर पर जाना है। यदि ऐसा मनुष्य दूसरे तीर की प्रार्थना करेगा और कहेगा "हे दूसरे तीर मुझे तेरी तरफ आना है" ऐसी प्रार्थना से क्या वह पुरुष दूसरे तीर पर जा सकेगा ? कदापि नहीं। दूसरे तीर पर जाने वाला मनुष्य यदि अपने को जंजीर से बाँध कर रखेगा तो वह दूसरे तीर पर जा सकेगा ? कदापि नहीं। इसलिए दूसरे तीर पर जाने वाले मनुष्यको नाव में ही बैठना होगा। वैसे ही ईश्वर पद प्राप्त करने के लिए मनुष्य को धर्म से ही चलना पड़ेगा। इसलिए आचरण का बहुत महत्त्व है। मैं धर्म को मानता हूँ। कहने से नहीं काम चलता। धर्म मनुष्य के आचरण से ही स्पष्ट होना चाहिये।

साधारण मनुष्य की ईश्वर की कल्पना विपरीत-सी होती है। बहुत से लोग ऐसा समझते हैं कि इस दुनिया में जो कुछ भी होता है वह ईश्वर की इच्छानुसार ही होता है। यदि एक मनुष्य दूसरे को मारता है तो वह ईश्वर की प्रेरणा से ही मारता है ऐसा वे मानते हैं। मारने की प्रेरणा ईश्वर देता है। उसको हथियार भी ईश्वर देता है और हथियार भी ईश्वर ही चलाता है और आश्चर्य की बात यह कि जिस पर हथियार चलाया जाता है, उसकी रक्षा भी ईश्वर ही करता है। इससे पता लगेगा कि अधर्मी या निष्क्रिय लोग ही ईश्वर का सहारा लेते हैं। जो लोग ईश्वर को एक व्यक्ति मानते हैं उन्हें मैं बहुत नम्रता से पूछता हूँ कि जिस ईश्वर को किसी ने देखा नहीं है उसकी भक्ति या प्रार्थना कैसे हो सकती है। भगवान् बुद्ध कहते हैं यदि कोई मनुष्य कहे कि इस जनपद में जो सबसे सुन्दर स्त्री है उससे मैं प्रेम करता हूँ। ऐसे मनुष्य को यदि किसी ने पूछा कि "जिस स्त्री से आप प्रेम करते हैं वह कैसी है ? याने काली है या गौर वर्णा है ऊँची है या छोटे कद की है ?" ऐसा पूछने पर यदि वह मनुष्य कहे कि मैंने उसे देखा नहीं है किन्तु मैं उससे प्यार करता हूँ। इस पर भगवान् बुद्ध कहते हैं कि उस मनुष्य का यह कथन प्रामाणिक हो सकता है क्या ? धर्म ही तो ईश्वर पद को दिलाता है तो धर्म पर जोर देना ही आगे उचित होगा। भगवान् बुद्ध कहते हैं कि अपने रिश्तेदारों को सहायता करना और दोष रहित कर्म करना यह सर्वश्रेष्ठ मंगल है। जिसके लिए सुज्ञ लोग हमें दोष देते हैं ऐसे कर्म को दूषित या दोष-युक्त कर्म कहा जाता है और जिस कर्म के लिए सुज्ञ लोग हमारी प्रशंसा करते हैं ऐसे कर्म को दोष-रहित कर्म कह सकते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रक्त का मूल्य ?

श्री जयरामसिंह

गत युगों की आज स्मृति जग पड़ी है।
देखता हूँ पुण्य-सलिला रोहिणी है बह रही।
और शाक्यों की अनी है कोलियों से कह रही॥
"जल कौन लेगा आज, निर्णय युद्ध ही इसका करेगा।
शौर्य होगा अधिक जिसमें श्री विजय की वह वरेगा॥"
युद्ध-प्रिय वर कोलियों ने शीघ्र यह उत्तर दिया।
"रण-हेतु प्रस्तुत हम सभी, जब युद्ध का निश्चय किया॥"
युद्ध हित दोनों दलों के वीर तब आगे बढ़े।
धनुष, खड्ग, सुवाण सहसा वेग से उनके बढ़े॥
शीघ्र सरिता का सुतट संग्राम स्थल बन गया।
रक्त में नद-जल विगल तत्काल ही सब सन गया॥
सूचना इस युद्ध की जब तथागत को मिली।
शान्ति की वह शान्त मुद्रा अत्यंत आकुल हो हिली॥
शीघ्र ही रण भूमि दिशि, फिर तथागत चल दिये।
किस भाँति रण का अंत हो, यह व्यथा उर में लिये॥
कर स्मरण प्रभु की दशा अश्रु की लगती झड़ी है।
गत युगों की आज स्मृति जग पड़ी है।
एक कर में रक्त अरु दूसरे में जल लिये।
बीचमें दोनों दलों के नाथ फिर स्थित हुये।
देख कर कुल पूज्य प्रभु को सब सुभट सहसा रुक गये।
क्रोध के वे केतु उन्नत एक क्षण हित झुल गये॥
"है मूल्य किसका अधिक" बोलो, वारि या इस रक्त का ?
परिव्यथित हलचल से हुआ उर युद्ध के प्रतिभक्त का॥
"रक्त का" आकाश में स्वर पुनः गुंजित हुआ।
युद्ध की चिर व्याधि का उपचार ज्यों पुंजित हुआ॥
"आप जब यह सत्य शाश्वत हैं सभी जन जानते।
किसलिए फिर मूढ़ होकर युद्ध दुस्तर ठानते ?"
देखता हूँ मूक जनकी दृष्टि जो भू पर गड़ी है।
गत युगों की आज स्मृति जग पड़ी है॥

ये उपेक्षित–

विन्ध्य प्रदेश के बौद्ध-नष्टावशेष

श्री भय्यालाल प्रजापति

स्वकीय सांस्कृतिक निधियों के प्रति जिस उदासीनता का परिचय भारत ने दिया है और दे रहा है, विश्व का शायद ही कोई स्वतन्त्र एवं जागरूक देश उतनी उदासीनता प्रदर्शित करता होगा। इसका कारण चाहे जो भी हो किन्तु इतना तो स्पष्ट ही है कि यही उदासीनता हमारी राष्ट्रीय-चेतना की शिथिलता के लिए पर्याप्त मात्रा में उत्तरदायी है। स्वराज्य प्राप्ति के पूर्व या पश्चात् जो भी कार्य इस दिशा में अपने देश में हुए हैं उसका अधिकांश श्रेय उन श्रद्धेय विदेशी विद्वानों को है जिन्होंने इन अमूल्य निधियों का मूल्यांकन करते हुए उनका पुनरुद्धार कर अपनी सहृदयता एवं उदारता का परिचय दिया।

यदि यह कहा जाय कि भारत के अतीत कालीन गौरव को स्वर्णिम बनाने की गरिमा से बौद्ध-धर्म की सांस्कृतिक निधियाँ गौरवान्वित हैं तो अतिशयोक्ति न होगी। भारत की मूर्तिकला, चित्रकला, वास्तुकला, स्थापत्य, तक्षण आदि की अद्वितीय कृतियों का स्मरण करते ही, हमारा ध्यान स्वभावतः अजन्ता, सारनाथ, साँची, बुद्धगया, खजुराहो, भरहुत आदि स्थानों में पहुँच जाता है। इसके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अलावा साहित्य, दर्शन, इतिहास आदि के क्षेत्र में बौद्धों की जो देन है उससे आज विश्व परिचित है। यदि किसी को उसका पूर्ण ज्ञान नहीं है तो उन्हीं बहुसंख्यक भारतीयों को जो स्वयं उसके उत्तराधिकारी होते हुए भी आँखों के समक्ष यत्र-तत्र बिखरी हुई इन निधियों का मूल्यांकन नहीं कर पा रहे हैं। हम नहीं कह सकते कि आधुनिक मनोविज्ञान और विज्ञान के लिए—बौद्धधर्म के अनात्मवादी एवं अनीश्वरवादी दर्शन में--किस कोटि का अक्षुण्ण भंडार भरा पड़ा है। क्या बौद्ध-साहित्य, कला, एवं सांस्कृतिक निधियों की उपेक्षा करके हम अपने पूर्व अर्जित ज्ञान-राशि की अवहेलना नहीं कर रहे हैं?

क्या आज बुद्धगया-विहार के उद्धार की कहानी पुरानी पड़ गई है? क्या हमें वे दृश्य स्मरण नहीं रहे, जिनमें हमने तथागत के बुद्धत्व-प्राप्ति के उस पवित्र स्थान पर ढोंगी पण्डों और पुजारियों की रसोई की कालिख देखी थी! ठीक इसी तरह समस्त भारत में बौद्ध-धर्म के उत्कर्ष काल के परवर्ती युग में निर्मित अनेक मठ और विहार उपेक्षित और जीर्णावस्था को प्राप्त अपने अवसान की बाट जोहते, और इस देश के दुर्भाग्य पर आँसू बहाते आज भी खड़े हैं।

उदाहरण के लिए मैं बौद्ध-जगत् की सम्पूर्ण जनता और विद्वानों का ध्यान निम्नांकित तथ्यों की ओर आकर्षित करने की चेष्टा करूँगा :—

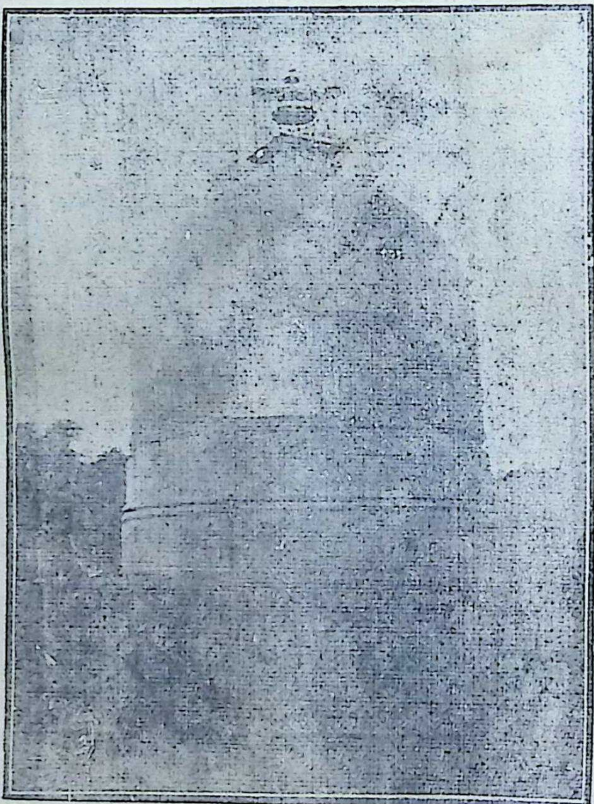

कुशीनगर का महापरिनिर्वाण स्तूप

विन्ध्य प्रदेश की राजधानी रीवा में, कालेज के पास झिरिया नामक कुण्ड पर सड़क के ठीक बगल में पीपल वृक्ष के नीचे अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियों के साथ दो मूर्तियाँ भगवान् बुद्ध की भी रखी हैं। लोग न जाने क्या समझकर सदियों से उन पर जल चढ़ाते आ रहे हैं। कभी-कभी उनपर सिन्दूर या काला रंग भी पोत दिया जाता है। इन मूर्तियों की ओर सर्वप्रथम हमारे सारनाथ-स्थित पूज्य भिक्षु धर्मरक्षित जी का ध्यान आकर्षित हुआ था। उन्हीं की प्रेरणा से मैंने इन मूर्तियों को गौर से देखा तथा इन मूर्तियों के उक्त स्थान पर पहुँचने के कारण आदि पर वर्षों सोचता रहा। कुछ लोगों से विचार-विमर्श भी किया, किन्तु सन्तोष नहीं हुआ। जहाँ तक लिखित या ऐतिहासिक सामग्री का प्रश्न है, बहुत ही अल्प सामग्री अभी तक उपलब्ध है अथवा जो होगी उसका अभी मुझे ज्ञान नहीं हो सका है।

रीवा राज्य के इतिहास का जहाँ तक प्रश्न है, यह अपने व्याघ्रवंशीय प्रभुओं के काल में कभी भी बौद्ध था—ऐसा प्रतीत नहीं होता। उक्त नरेशों के पूर्व यह प्रदेश शायद चेदि जनपद का एक जंगली प्रदेश रहा होगा। आवागमन के साधन अत्यन्त विरल रहे होंगे। रीवा के दक्षिण-पश्चिम में नागौद रियासत में भरहुत नामक प्रसिद्ध बौद्धकालीन समृद्ध नगरी का अवशेष मिलता है। इसी की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

परम्परा में हम अनुमान कर सकते हैं। रीवा के आस-पास के जंगली प्रदेश में स्थित जन-समुदाय या गाँव बौद्धधर्म से प्रभावित रहे होंगे। रीवा से ८ मील पूर्व की ओर गोर्गी नामक एक ऐतिहासिक स्थल है जो रीवा राज्य के स्थापित होने के पूर्व एक समृद्धशाली नगर था। जिसके उत्थान-पतन का इतिहास किंवदन्तियों के रूप में लोगों में प्रचलित है। इस स्थल से प्राप्त हुई बहुत-सी मूर्तियों का संग्रह बहुत दिनों तक रीवा में था। अब वे सभी उठाकर छतरपुर के धुवैला नामक शासकीय पुरातत्त्व संग्रहालय में चली गई हैं। गोर्गी से शंकर-पार्वती की विशाल मूर्ति जो आजकल रीवा में है विशेष प्रसंशनीय है। जहाँ तक मुझे मालूम है, अभी तक गोर्गी में उत्खनन-कार्य नहीं हुआ और न ही कोई प्रमाणित निर्णय पुरातत्त्व वेत्ताओं ने दिया है। श्री जायसवाल जी की एक पुस्तक 'मध्यप्रदेश' और रीवा राज्य गजेटियर में इसके सम्बन्ध में पढ़ने को कुछ पंक्तियाँ मिलती हैं; जिससे केवल इतना ही ज्ञात हो सका है कि यहाँ के नरेश शैव मतावलम्बी थे। अभी तक यह सब कुछ विचारणीय है कि यह नगर किस काल में बसा, बसने के पूर्व इस स्थान की क्या स्थिति थी अथवा कहीं यह शैव मतावलम्बी होने के पूर्व बौद्ध तो नहीं था।६

अब प्रश्न यह है कि रीवा-स्थित बुद्ध-मूर्तियों का सम्बन्ध भरहुत और गोर्गी से किस तरह का है। और क्या ये मूर्तियाँ भरहुत से आयीं या रीवा-स्थित बौद्ध-विहारों में थीं जो बाद को स्थानान्तरित की गईं।

रीवा के उत्तर-पूर्व ८ मील पर रायपुर कर्चुलियान नामक कस्बा है। इस जगह कर्चुली क्षत्रियों की प्रधानता है। रीवा राज्य के इतिहास में इन क्षत्रियों की वीरता की सराहना तथा इनकी दूरदर्शिता का परिचय रीवा राज्य की प्रमुख लड़ाई जो नैकहाई की लड़ाई के नाम से प्रसिद्ध है—में मिलता है। कुछ विद्वानों ने हैहय वंशीय क्षत्रियों का सम्बन्ध इन कर्चुली क्षत्रियों से जोड़ा है। हो सकता है इन मूर्तियों का कुछ सम्बन्ध इन कर्चुली क्षत्रिय से भी हो। क्योंकि ऐसा माना जाता है कि हैययवंशीय क्षत्रिय बौद्ध थे।

मैंने रीवा में लगभग १० और रीवा के आसपास आठ दस मील के व्यास के अन्दर के गाँवों में करीब पचीसों ऐसे मठ (लोक भाषा में 'मड़फे') देखें हैं जिन्हें बिना किसी हिचक के मैं बौद्ध-मठ समझता हूँ। मेरे ऐसा समझने का कारण यह है कि ये सभी मठ या मड़फे स्थापत्य की दृष्टि से एक से हैं, जीर्णावस्था में हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि पिछली पाँच, छः शताब्दी से उपेक्षित हैं। इसके अलावा किन्हीं-किन्हीं में शिवलिंग स्थापित होने पर भी किसी के श्रद्धा के स्थान नहीं हैं। अधिकांश मठ मूर्ति विहीन हैं। सबसे बड़ी विशेषता यह यह है कि ये मठ अछूत वस्तियों के पास या इन वस्तियों के मध्यमें स्थित हैं।

मेरा अनुमान है कि इस प्रदेश की आदिम शासक जातियाँ जो 'भर' नाम से प्रख्यात थीं, जिससे 'भरहुत' का प्रादुर्भाव भी मालूम पड़ता है, पहले बौद्ध थे और बाद को 'भारशिव' नाम से इतिहास में गोर्गी आदि के शैव मतावलम्बियों के. रूप में विकसित हुए। और बौद्ध जनता जैसा कि बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर का मत है बाद में अछूत जातियों के रूप में हिन्दू धर्म में आत्मसात् किये जाने पर भी फोड़े या भयानक व्रण के रूप में हिन्दू-समाज से पृथक् ही दिखलाई पड़ रही हैं।

शैवों ने पहले बौद्ध मठों से बुद्ध मूर्तियों को यत्र-तत्र विसर्जित कर बाद में उनमें शिवलिंग की स्थापना करके उन्हें शैव मठों का रूप प्रदान किया होगा। किन्तु शैवों के शीघ्र पतन के पश्चात् तथा वैष्णव सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा पर ये मठ चिर उपेक्षणीय हो गये होंगे। आजकल लोग इन्हें भूतों, जिनों और संन्यासी के मृतात्मा का वास समझ कर इनमें जाने से भय खाते हैं।

उक्त तथ्यों के अतिरिक्त मैं इन निधियों के बौद्ध धर्म की होने तथा अछूत और नीची जाति की जनता के बौद्ध जनता होने के प्रमाण में यह कहना चाहूँगा कि इस क्षेत्र की इन्हीं नीची और अछूत जातियों में बंगाल के अंतिम बौद्धधर्म का विकृत अवशेष 'धम्मपूजा' की परम्परा आज भी विद्यमान है।

अन्त में क्या हम आशा करें कि इन बौद्ध धर्म की सांस्कृतिक निधियों के पुनरुद्धार के कार्य को समस्त बौद्ध जगत या बौद्ध धर्म और इतिहास में रुचि रखनेवाले सुहृद्‌बन्धु अपना कार्य समझ कर करेंगे। साथ ही क्या हमारा भारतीय समाज अपनी सांस्कृतिक निधियों को निष्पक्ष-भाव से देखकर उनका उचित मूल्यांकन करेगा?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भरहुत की शिल्पकला

श्री गंगासिंह बिरोरिया

हमारा देश भारत, भूमण्डल के प्राचीन सभ्य एवं सुसंस्कृत देशों में से एक है। प्राचीन ईरान, मिस्र तथा यूनान जैसे देशों के साथ-साथ भारत में भी सभ्यता एवं संस्कृति का विकास हुआ है। श्री मार्शल के मतानुसार तो कुछ अंशों में सिन्धु घाटी की सभ्यता अपनी समकालीन सभी सभ्यताओं में श्रेष्ठ थी। इसका प्रमाण हमें मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा के अवशेषों से मिलता है। आगे चलकर हमें अपनी सभ्यता का क्रमिक विकास हजारों वर्षों के पश्चात् मौर्यकाल एवं सुगलकाल में मिलता है। मौर्यकाल इसलिए विशेष स्थान रखता है कि उसका प्रामाणिक इतिहास हमें मिलता है, तथा उस काल की कला के अवशेष उपलब्ध हैं। वैसे तो रामायण काल, महाभारत काल तथा बौद्ध काल की सभ्यता एवं संस्कृति का हमारे देश में प्रचार तथा बड़ा मान है किन्तु उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि कुछ कमजोर है, क्योंकि हमारे पास उस काल के प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। किन्तु आगे चलकर ई० पू० ३०० के लगभग और उसके आगे की सभ्यता एवं संस्कृति के बारे में हमारे पास काफी प्रमाण मौजूद हैं जिन पर हमें गर्व है।

हमारे देश में आज भी ऐसे अनेक स्थान हैं जहाँ पर हमारी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति की छाप, अनेक भग्नावशेषों के रूप में अंकित है—अनेकानेक स्तूपों मन्दिरों एवं पुरातत्व के खँडहरों में हमारी प्राचीन संस्कृति की छाप पड़ी हुई है। इस लेख में 'भरहुत स्तूप' के बारे में (जिसका आज अस्तित्व नहीं रह गया है) कुछ प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

भरहुत स्तूप की स्थापना मौर्यकाल में हुई थी या सुगल काल में इस बात पर विद्वानों का मत बहुत स्पष्ट नहीं है। किन्तु इस बात का प्रमाण है कि इसका विकास शुंग काल में हुआ।' । आज जब हम शुंग काल की पाषाण कला-कृतियों को देखते हैं तो अपने को हम अत्यन्त सभ्य एवं कलाप्रेमी मनुष्य जाति की सन्तान पाते हैं, जो प्रत्येक भारतीय के लिए बड़े गौरव की बात है।

मौर्य काल के पश्चात् भारत में शुंगों ने अपना राज्य स्थापित किया। हालांकि मौर्य युग भी भारतीय इतिहास में हर प्रकार से एक सम्पन्न युग रहा है फिर भी मौर्य युग के स्मृति-चिह्नों में प्राचीन साहित्य, सारनाथ के अवशेषों, कुछ अशोक स्तम्भों तथा साँची के बड़े स्तूप में अंकित कला के अतिरिक्त उस काल के समाज की गतिविधियों का कोई व्यापक चित्रण हमें नहीं मिलता, क्योंकि वह प्रायः लुप्त हो चुका है। किन्तु शुंग काल में निर्मित भरहुत स्तूप को, जिसके अवशेष अब केवल संग्रहालयों में ही मिलते हैं या फिर कुछ बिखरे हुए अंश आज भी भरहुत के आस-पास के स्थानों में पड़े हैं, देखने से हमें शुंग कालीन भारतवर्ष की झलक प्रत्यक्ष रूप में देखने को मिलती है। भरहुत के अवशेष कलकत्ता संग्रहालय, प्रयाग संग्रहालय एवं तुलसी संग्रहालय रामवन (सतना) म० प्र० में सुरक्षित हैं। तुलसी संग्रहालय का महत्त्व शायद इस दृष्टि से अधिक है कि वह प्राचीन भरहुत के निकट ही सतना नगर के समीप है, जहाँ से प्राचीन भरहुत स्थल १० मील के लगभग पड़ता है। इस संग्रहालय के संस्थापक, बाबू शारदा प्रसाद जी ने जिस लगन से कुछ मूर्तियों का संग्रह किया है, वह वास्तव में प्रशंसनीय है। यद्यपि तुलसी संग्रहालय, रामवन, में भरहुत की पूर्ण मूर्तियाँ, अधिक संख्या में नहीं हैं किन्तु वे महत्त्व पूर्ण अवश्य हैं। किन्तु प्रयाग के पं० व्रजमोहन व्यास ने भरहुत की मूर्तियों का जो संकलन किया है वह अधिक प्रशंसनीय है और आकार में भी बड़ा है। प्रयाग संग्रहालय में भरहुत के कुछ बहुत ही सुन्दर शिला-चित्र सुरक्षित हैं। भरहुत स्तूप के अधिकांश महत्त्वपूर्ण अवशेष

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कलकत्ता संग्रहालय में हैं। वहाँ पर तो भरहुत के अवशेषों का तथा मूर्तियों का एक पूरा कक्ष ही है।

भरहुत में हमारी संस्कृति एवं कला का भण्डार कई शताब्दियों से छिपा पड़ा था। समय के झंझावातों ने भरहुत स्तूप को भूमिगत कर दिया। भरहुत के महत्त्व का भारत की जनता के सामने लाने का श्रेय सबसे पहले आज से ८७ वर्ष पूर्व जनरल कनिंघम को प्राप्त हुआ था। कनिंघम महोदय ने, जो तत्कालीन पुरातत्त्व विभाग के अध्यक्ष थे, भरहुत के महत्त्व को समझा और परिश्रम करके उन मूल्यवान् अवशेषों को, जो बिखरी पड़ीं थीं और जिन पर अतीत की कला अंकित थी, संग्रह करके कलकत्ता संग्राहालय में पहुँचा दिया। एक विदेशी होते हुए भी उन्होंने भारतवासियों का जो उपकार किया है, वह प्रशंसनीय है।

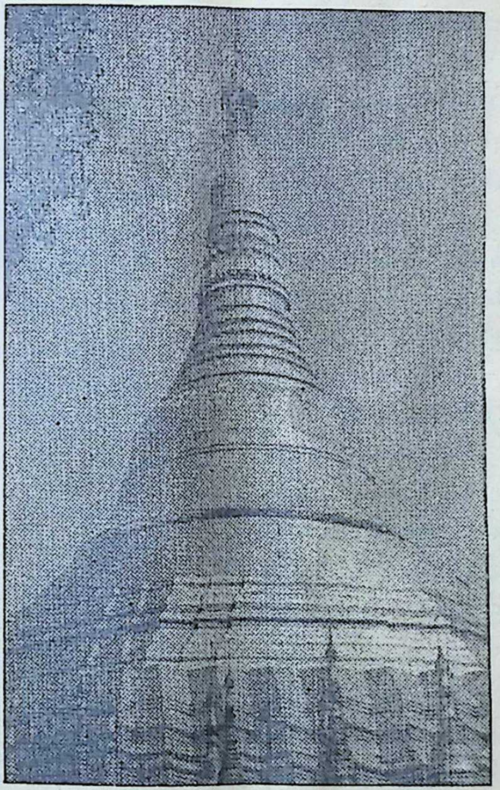

बर्मा का श्वेदगौं पगोडा

भरहुत की खोज

आज से ८७ वर्ष पूर्व सन् १८७३ में जब कनिंघम् महोदय 'सेन्ट्रल इंडिया' (वर्तमान मध्यप्रदेश) का दौरा कर रहे थे, तो उन्हें भरहुत स्तूप के बारे में पता चला। उस समय भरहुत नागौद राज्य के अन्तर्गत था। जब वे एक जंगल में स्थित भरहुत स्तूप को देखने गये तो उन्होंने वहाँ पर एक बौद्ध विहार के अवशेष तथा बौद्ध वेष्टिनियों (रेलिंगस) के कुछ स्तम्भ पाषाण के कुछ हत्थों के साथ जुड़े हुए देखे थे, जिनके ऊपर अलंकृत उष्णीय खंड (कोपिंग) रखे हुए थे। ये वेष्टिनियाँ एक प्रवेश द्वार के स्तम्भ से, जो कभी तोरण का आधार था, पूर्व की ओर जुड़ी हुई थी। उत्तर एवं दक्षिण की ओर भी उन्होंने प्रवेशद्वारों के अवशेष देखे। निरीक्षण करने के पश्चात् उन्होंने इन अवशेषों का संकलन आरम्भ कर दिया और खोदाई शुरू कर दी। इस खोदाई में सैकड़ों महत्त्वपूर्ण मूर्तियाँ तथा कामदार शिलायें पाई गयीं।

कनिंघम् महोदय के मतानुसार भरहुत स्तूप का आकार-प्रकार साँची स्तूप के समान ही रहा होगा। खंडहर को देखने पर उन्होंने उसकी लम्बाई-चौड़ाई और गोलाई के अनुसार यह अनुमान लगाया। अपनी खोज के अनुसार उन्होंने यह भी मत प्रकट किया कि सन् १६७० के लगभग भरहुत स्तूप का अस्तित्व विद्यमान रहा होगा, क्योंकि भटनवारा के ठाकुर की गढ़ी में, जो भरहुत के समीप थी, अनेक शिलाएँ ऐसी लगी थीं जो स्तूप की थीं। गढ़ी कनिंघम के समय में २०० वर्ष पुरानी मानी जाती थी। उस समय स्तूप एक घने जंगल से घिरा हुआ था। बाद में जब भरहुत गाँव की स्थापना हुई तो अधिकांश घर, जिनकी संख्या उस समय २०० के लगभग थी, इसी स्तूप के ईंटों से बने थे।

भरहुत स्तूप की कला

शुंगकाल में भारतीय मूर्तिकला बहुत उन्नति कर चुकी थी। उस युग की कला की एक विशेषता यह थी कि उसमें पश्चिमी एशिया की कला का भी सामंजस्य था

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और उसको भारतीय कला के साथ ऐसा मिलाया गया कि उसका विदेशीपन समाप्त हो गया था। आगे चलकर तो भारतीय कला समस्त एशिया में अपनी धाक जमा चुकी थी, विशेष कर गुप्त काल में। दूसरी विशेषता यह थी कि उसके द्वारा अधिकांश जन-समूह के मानस, उसके सांस्कृतिक आदर्श तथा उसकी परम्परा का प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। इस विषय में यह मौर्य काल से बिलकुल भिन्न है। उस युग की तीसरी विशेषता यह थी कि वह अपने समय के जन-जीवन का चित्रण बड़े ही सरल रूप में प्रस्तुत करती है। भरहुत स्तूप में २१०० वर्ष तक के भारत का दिन-प्रति-दिन का सजीव जीवन अंकित है।

भरहुत के पाषाण-खण्डों में मनुष्य तथा पशु पक्षियों के सुन्दरतम चित्र खुदे हुए हैं। मनुष्यों के घर तथा व्यवसाय के साधन, देवताओं तथा नरेशों की मूर्तियाँ यक्ष-यक्षणियों की मूर्तियाँ, आश्रम, मन्दिर, आवागमन के साधन रथ, गाड़ियाँ नौकाएँ, विभिन्न प्रकार की वेष-भूषाएँ, श्रृंगार के प्रसाधन, अस्त्र-शस्त्र, आभूषण तथा अनेक प्रकार के आश्चर्यजनक आकल्पवन (डिजाइन) जो आज के विज्ञान युग की तुलना में भी अपना स्थान रखते हैं—ये सभी वस्तुएँ वास्तविक रूप में प्रदर्शित की गयी हैं। इससे उस युग की भारतीय जनता के मानस और विचारों के सम्बन्ध में एक अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है।

यद्यपि इन शिलाचित्रों के अंकन का उद्देश्य मनुष्य जाति को भगवान् बुद्ध के जीवन की घटनाओं तथा बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों से वस्तुतः परिचित कराना ही माना जा सकता है, किन्तु भरहुत स्तूप के कलाकार तो ऐसा लगता है, मानो जीवन के दिन-प्रतिदिन के चित्रों को अंकित करने में हो लग्न हो गये हों! भरहुत के शिला-चित्रों में न केवल प्राणि जगत को महत्त्व दिया गया है वलिक उनमें प्रकृति के सौन्दर्य का भी जी भरकर चित्रण किया गया है। पुष्पों, लताओं, फलों तथा वृक्षों के जो सुन्दर चित्र उरेहे गये हैं, उन्हें देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इनके शिल्पकार को न केवल मनुष्यों से अनुराग था बल्कि उसके मन में जगत् के प्रत्येक प्राणी के लिए स्नेह-भावना विद्यमान थी। इस दृष्टि से भरहुत की कला भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की अमूल्य देन है।

भरहुत का धार्मिक महत्त्व

भरहुत स्तूप एवं बौद्ध विहार के निर्माण के समय भारत में ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान हो रहा था, किन्तु बौद्धधर्म भी अपनी जड़ अच्छी तरह जमाये हुए था। जहाँ स्तूपों में बौद्ध-जातकों के अनेक चित्र चित्रित किये गये, वहाँ उनमें देवी-देवताओं, नागों, यक्ष यक्षिणियों के भी अनेक चित्र अंकित किये गये थे। इससे यह अनुमान होता है कि भरहुत कालीन धर्मों में सहिष्णुता थी और बौद्ध तथा हिन्दू-धर्म में कोई मनमुटाव नहीं था तथा दोनों धर्म अपने-अपने स्थान पर स्वतन्त्र थे, यद्यपि उस समय प्रचार बौद्ध धर्म का ही अधिक था। बौद्ध-साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि शुंगों को बौद्ध धर्म के साथ द्वेष था, क्योंकि उन्होंने बौद्धों के प्रति बहुत अत्याचार किये थे। किन्तु यदि यह बात सत्य थी तो शुंगों के काल में साँची के छोटे स्तूप तथा भरहुत जैसे स्तूप कैसे बन पाते? यह सही है कि पुष्यमित्र शुंग एक कट्टर ब्राह्मण था और बौद्धों के प्रति उसका जो कड़ा रुख था, उसका एक राजनीतिक उद्देश्य था। प्रख्यात विद्वान ई० बी० हेवेल (देखिये स्तूप आफ भरहुत पृष्ठ ५) महोदय के मतानुसार पुष्यमित्र ने बौद्धों का दमन इसलिए किया था कि उनके संघ उस समय राजनीति के अखाड़े बन चुके थे। पुष्पमित्र का इरादा बौद्धों की धार्मिक मान्यताओं को कुचलने का नहीं था। शुंग शासन अपने राज्य के प्रति विद्रोह को सहन नहीं कर सकता था, और वह स्वाभाविक भी था। पुष्य-मित्र के उत्तराधिकारियों ने तो बौद्धों के प्रति बड़ी ही उदारता दिखलायी क्योंकि उन्हीं के समय में भरहुत स्तूप का निर्माण तथा विकास होना माना गया है, जो बौद्धधर्म की सुदृढ़ता का प्रतीक था। यह स्तूप प्रसिद्ध बौद्ध तीर्थों के मार्ग पर पड़ता था, जो दक्षिण में उज्जैन और भिलसा के मध्य, उत्तर में कौशाम्बी और श्रावस्ती तथा पूर्व में पाटलिपुत्र तक के मार्ग से जुड़ा था।

भरहुत की कला का ऐतिहासिक महत्त्व

भरहुत की कला से यह आभास मिलता है कि मौर्य युग तथा शुंग युग तक बौद्धधर्म में भगवान् बुद्ध की मूर्ति नहीं पूजी जाती थी। भरहुत के शिलाचित्रों में एक भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ऐसा चित्र नहीं है, जिसमें भगवान् बुद्ध की मूर्ति दिखाई गई हो। भरहुत के सारे चित्रों में धर्म-चक्र, स्तूप तथा बुद्ध की चरणपादुकाओं को ही पूजा की वस्तु दिखाया गया है। इसके अलावा बोधिवृक्ष को भी पूजा की वस्तु माना गया है। इससे यह प्रमाणित होता है कि भगवान् बुद्ध को मूर्ति के रूप में शुंग काल के पश्चात् पूजा जाने लगा था।

इस कला का दूसरा ऐतिहासिक महत्त्व यह है कि भरहुत के शिलाचित्रों में कोशल के राजा प्रसेनजित् तथा मगध के राजा अजातशत्रु को भी चित्रित किया गया है और उन्हें भगवान् बुद्ध के धर्म का अनुयायी दिखाया गया है। स्तूप में राजा प्रसेनजित् तथा अजातशत्रु के नाम के अलग-अलग दो स्तम्भ थे, जिनमें उनके जीवन की घटनाएँ अंकित की गयी थीं। इन चित्रों से इस ऐतिहासिक तथ्य की पुष्टि होती है कि इन दोनों राजाओं ने बौद्धधर्म ग्रहण कर लिया था। इसके अलावा भरहुत के शिलाखण्डों में जातक-कथाओं तथा भगवान् बुद्ध के सात जन्मों के चित्र भी खुदे हुए हैं। ये चित्र आज से लगभग २१०० वर्ष पूर्व खुदे थे। अतः इनका ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत बड़ा महत्त्व है और ये हमारे लिए अमूल्य निधि हैं। इन चित्रों के शीर्षक पालि तथा ब्राह्मी लिपियों में खुदे हुए हैं।

भरहुत-स्तूप का काल

भरहुत-स्तूप का काल मौर्य युग तथा शुंग युग दोनों ही माना गया है, यह शायद इसलिए कि सम्राट अशोक ने जिस समय स्तूपों का निर्माण कराया था, उसी समय भरहुत में भी स्तूप की स्थापना की गई रही हो। किन्तु भरहुत के शिलाचित्रों में मौर्य राजाओं का कोई उल्लेख नहीं है। यह भी हो सकता है कि स्तूप की स्थापना अशोक ने ही करवाई हो। किन्तु कनिंघम साहब ने जब भरहुत की खोदाई की, तो उन्हें भरहुत के तोरण द्वार के बाएँ स्तम्भ पर ब्राह्मी लिपि में निम्न लेख खुदा हुआ मिला—

शुंगनम् राजे राजनी गागीपुतस विसदेवस पोतेण गोतीपुत्तस आगरजस पुतेणस वाच्छिपुतेन धनमूतिना काटितम् तोरणम् सिला कम्भ मंतो च उपमाननो

अर्थात्: शुंगों के राज्यकाल में प्रस्तर से उत्कीर्ण इस तोरण का निर्माण गोमंतीपुत्र अग्रज के पुत्र एवं राजा, गार्गी पुत्र विश्वदेव के पौत्र धनभूति द्वारा किया गया।

उक्त लेख से इस बात की पुष्टि होती है कि स्तूप का निर्माण शुंग काल में पूरा हुआ है। शुंग राज्य की नींव पुष्यमित्र शुंग ने ई० पू० १८४-८५ में डाली थी, किन्तु पुष्यमित्र का उल्लेख स्तूप के किसी चित्र या लेख में नहीं है। अतः पुष्यमित्र के उत्तराधिकारियों ने ही इस स्तूप के निर्माण में सहयोग दिया होगा। इस प्रकार भरहुत स्तूप का काल कम से कम २१००–२२०० वर्ष पूर्व का पड़ता है। इन पंक्तियों के लेखक ने भरहुत स्तूप के काल के बारे में प्रकांड विद्वान्, बौद्धधर्म के विशेषज्ञ तथा अनेक भाषाओं के ज्ञाता महापंडित राहुल साँकृत्यायन जी से जानकारी प्राप्त की थी। पंडित जी के मतानुसार स्तूप शुंग काल का है।

भरहुत की वर्तमान स्थिति तथा मार्ग दर्शन

भरहुत का प्राचीन रूप लुप्त हो चुका है। आज वहाँ पर स्तूप तथा विहार का कोई चिह्न शेष नहीं है। लेकिन भरहुत नाम का एक ग्राम अब भी मौजूद है और वह लाल पहाड़ भी मौजूद है जिसकी ढलान पर स्तूप बना हुआ था। इसी लाल पहाड़ से वह सुन्दर लालिमा युक्त पत्थर निकाला गया था। जिस पर शुंगकालीन शिल्पकारों ने अपने सुन्दर चित्र अंकित किए थे। वह मिट्टी भी मौजूद है। बाकी और कुछ नहीं।

भरहुत ग्राम मध्यप्रदेश के सतना जिले में पड़ता है। सतना नगर से भरहुत दस मील के लगभग पड़ता है, जहाँ वर्षा ऋतु को छोड़कर बाकी ऋतुओं में पैदल या जीप द्वारा जाया जा सकता है। सतना नगर मध्य रेलवे की इलाहाबाद, कटनी, जबलपुर तथा बम्बई लाइन पर पड़ता है। कलकत्ता-बम्बई मेल भी सतना से होकर जाती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रेडियो रूपक

चिरन्तन सन्देश

श्री सुमन वात्स्यायन

(प्रारंभिक संगीत की समाप्ति, पृष्ठभूमि में मंगलसूत्र का पाठ)

वाचक : वैशाख पूर्णिमा का भारतीय इतिहास में विशेष महत्त्व है। भारतीय संस्कृति के परम उन्नायक भगवान् बुद्ध का आज ही जन्म हुआ था, आज ही उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया और आज ही महापरिनिर्वाण। वाराणसी में धर्मचक्र-प्रवर्तन के समय बुद्ध ने अपने अनुयायी भिक्षुओं को आह्वान करते हुए कहा था···

(सूत्र पाठ का स्वर तिरोहित हो जाता है)

स्वर १ (गंभीर स्वर में)

चरथ भिक्खवे चारिकं बहुजनहिताय बहुजन सुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। देसेथ भिक्खवे धम्मं आदिकल्याणं मज्झे कल्याणं परियोसान कल्याणं सात्थं सव्यंजनं केवल परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेथ।

स्वर २ : भिक्षुओं बहुजन की भलाई के लिए सुख के लिए, संसार के संत्रस्तों पर दया करने के लिए, देव-मनुष्यों के प्रयोजन के लिए, हित के लिए, उनके सुख के लिए विचरण करो। भिक्षुओ, आदि, मध्य और अन्त सभी अवस्था में कल्याण कारक धर्म का उसके शब्दों और भावों सहित उपदेश करके सर्वांश में परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य का प्रकाश करो।

वाचक—इस उत्प्रेरक आदेश के साथ भगवान् बुद्ध ने अपने अनुयायी भिक्षुओं को सभी दिशाओं में धर्म प्रचारार्थ भेजा।

अल्पकाल में ही उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम—समस्त भारत भूमि में करुणा और मैत्री का अमर संदेश फैल गया। भगवान् बुद्ध के परिनिवृत्त होने के कुछ शताब्दी बाद भारतीय संस्कृत्याकाश में धर्मराज अशोक के रूप में एक सतत् देदीप्यमान नक्षत्र का उदय हुआ। सभी ओर उसकी महानता की चर्चा होने लगी।

१ नागरिक—क्यों भाई, आज तक तो देश जीत कर राजा लोग खुशी मनाते थे, पर न मालूम हमारे सम्राट को क्या हो गया है ?

२ नागरिक—मैंने तो सोचा था कलिंग विजय का महोत्सव पहले की विजयों से भी अधिक धूमधाम से मनाया जायगा। पर अब तो सुनते कुछ और हैं।

१ नाग०—क्या बात हुई कुछ समझे भी, देखो राजमहल के द्वार पर कोई चहल-पहल नहीं। सशस्त्र योद्धाओं के स्थान पर काषाय वस्त्रधारी भिक्षुओं का आना-जाना लगा है।

२नागरिक—हाँ भाई, मैंने तो सुना है कलिंग युद्ध में होनेवाले भयंकर रक्तपात को देखकर सम्राटको युद्ध से घोर घृणा हो गयी है। पाटलिपुत्र के संघ-नायक तिष्यमहास्थविर ने सम्राट को बौद्ध धर्म की दीक्षा दी है। सम्राट ने संकल्प किया है कि भविष्य में वे राज्य जीतने की अपेक्षा मनुष्य का हृदय जीतने का प्रयत्न करेंगे।

१ ना०—(छैनी और हथौड़े की आवाज) क्यों भाई इन पत्थरों पर क्या खोदा जा रहा है ?

२ नाग—चलो, नजदीक जाकर देखें।

१ नाग०-–(जाते हुये हथौड़े की तेज आवाज में) क्यों भाई इस शिला-स्तंभ पर आप क्या खोद रहे हैं।

३ नाग०-–राजाज्ञा खोद रहे हैं।

१ नाग०—अच्छा राजाज्ञा है इसमें क्या लिखा है ?

३ नाग०: (छैनी का स्वर कम होता है) यह अभी अधूरा है। राजांगन में अनेक स्तम्भ खड़े किये गये हैं, इन में पूरी राजाज्ञा खुदी है। वहाँ जाकर पढ़ लो।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

१ नाग० : धन्यवाद भाई, अच्छा चलो वहाँ चलें, (पदध्वनि)

२ नाग : अरे यह तो बड़े-बड़े स्तम्भ हैं। (बहुत से लोगों द्वारा एक साथ पढ़ने के कोलाहल के बीच) आप सब कोई शान्त रहें। मैं पढ़ कर सुना देता हूँ।

देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने कलिंग को जीता। इस लड़ाई में एक लाख आदमी मारे गये। डेढ़ लाख बंदी बनाये गये। और इससे भी अधिक लोग युद्धजनित रोग एवं महाभारी आदि में मरे। इस युद्ध से देवताओं के प्रिय को बड़ा पश्चाताप हुआ है, क्योंकि जहाँ लोगों का वध, मरण और देशनिकाला होता है, उस देश को मैं जीतने पर भी नहीं जीता हुआ मानता हूँ। कलिंग विजय से मुझे गहरी चोट लगी है, देवताओं का प्रिय सब जीवों का अक्षति, समचर्या तथा प्रसन्नता चाहता है। अब धर्म विजय को ही देवताओं का प्रिय सच्ची विजय मानता है।

१ नाग : अच्छा भाई, अब इस दूसरे स्तम्भ को भी देखो, इस पर क्या लिखा है।

२ नाग : इस पर लिखा है—देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी कहते हैं, धर्म की रक्षा, अभिवृद्धि और विभिन्न सम्प्रदायों में पारस्परिक प्रेम एवं सद्भाव बनाये रखने के लिए मैंने धर्म महामात्र नामक राज कर्मचारी नियुक्त किया है। ये अधिकारी स्वामी और सेवकों गरीब और धनवानों, अनाथ और वृद्धों के हित और सुख के लिए हैं। नर-हत्या को रोकना और विपत्ति ग्रसित लोगों को सहायता करना इनका कर्तव्य होगा। मैं भोजन करता रहूँ या अन्तः पुर में रहूँ, शयन-गृह में रहूँ या उद्यान में रहूँ हर समय मुझे प्रजा का हालचाल बताया जाय। मैं प्रत्येक अवस्था

लुम्बिनी में सिद्धार्थ कुमार का जन्म

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

में प्रजा की सेवा करना चाहता हूँ। मुझे प्रजा की सेवा करने में कभी तृप्ति नहीं होती।

१ स्वरः—क्यों भाई, सम्राट अशोक को लोग चंडाशोक कह कर पुकारते थे पर अब तो सारी बात ही बदल गयी मालूम होती है ?

(ढिंढोरा पीट कर घोषणा की जाती है)

४ उद्घोषक—पाटलिपुत्र निवासियों, कल प्रातः काल से नव निर्मित अशोकाराम में राजगुरु तिष्यस्थविर के सभापतित्व में सद्धर्म का तृतीय संगायन प्रारंभ हो रहा है। इस पावन अवसर पर सारे जम्बूद्वीप एवं पड़ोसी राष्ट्रों से एक हजार चुने हुए धर्मज्ञ भिक्षु एकत्रित हो रहे हैं।

(सड़क पर का कोलाहल, अशोकाराम वही सड़क जायगी'''समय हो चला है'''जल्दी चलो'''कार्यवाही शुरू हो रही होगी, आदि के स्वर)

वाचक०—सम्राट अशोक की प्रेरणा से आचार्य तिष्य के नेतृत्व में नौ महीनों तक एक हजार चुने हुए विद्वान भिक्षुओं ने बुद्ध वचनों का संगायन किया। इस तरह धर्म की परिशुद्धि के पश्चात् तिष्यस्थविर ने संघ को संबोधित करते हुए कहा''''''

५ तिष्यस्थविर—(प्रेरणात्मक स्वर में) भदन्तगण, आप सब लोग जानते हैं, कि भगवान् तथागत की करुणा और मैत्री का पावन संदेश जंबूद्वीप के लिए ही नहीं था, बल्कि वह संसार के समस्त पीड़ित और संत्रस्त प्राणियों के लिए था। अब हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि हम उस चिरन्तन सन्देश को समस्त विश्व के प्राणियों तक पहुँचा दें। संसार में जब तक काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय और मिथ्या विश्वास है, तब तक तथागत के उत्तराधिकारी हम भारतीयों को चैन और आराम कहाँ।

(एक साथ कई शब्द-हम लोग तैयार हैं, हम
आत्म बलिदान तक के लिए तैयार हैं।)

५ तिष्यस्थविर—मैं आप के उत्साह का आदर करता हूँ, पर ध्यान रखें, यह मार्ग अत्यधिक कंटकाकीर्ण है। आप को अपरिचित देशों में जाना होगा। भिन्न जलवायु, भाषा, वेश, रहन-सहन, आचार-विचार, और धार्मिक विश्वासों का सामना करना पड़ेगा। मातृभूमि, परिजन और बन्धु-बान्धोंवों के मधुर स्नेह को सदा के लिए तोड़ना पड़ेगा। चंचल लहरों वाले विस्तृत समुद्र, दुर्गम जंगलों और घाटियोंवाले उत्तुंग पर्वत शिखरों एवं जलहीन वालुकामय रेगिस्तान को पार करना होगा।

६ एक सभासद—(फिर कोलाहल में से एक स्वर सुनाई पड़ता है) आचार्य ! मैं भिक्षु महेन्द्र तथागत का एक साधारण अनुयायी, प्रत्यन्त देशों में जाकर भारतीय धर्म और संस्कृति के प्रसार एवं प्रचार एवं प्रचार के लिए अपना जीवन समर्पित करने को प्रस्तुत हूँ।

(फिर कोलाहल में अरे यह तो सम्राट् अशोक के
पुत्र कुमार महेन्द्र हैं। कुमार महेन्द्र हैं,
कुमार महेन्द्र।)

५ तिष्यस्थविर—भदन्तगण, भिक्षु महेन्द्र के वचनों को सुनकर मुझे विश्वास हो गया है कि हम भारतीय इस विक्षुब्ध विश्व को शान्ति, समता और करुणा का चिरन्तन सन्देश सुनाने में पूर्ण सफल होंगे। कल प्रातः काल इस महत्त्वपूर्ण योजना के संबन्ध में सम्राट स्वयं आप के समक्ष अपना मन्तव्य प्रस्तुत करेंगे।

(सूत्रपाठ के साथ सब का प्रस्थान)
[दृश्य-परिवर्तन सूचक संगीत]

५ तिष्यस्थविर—भदन्तगण, उपासक और उपासिकाओं, यह प्रसन्नता की बात है कि आज की इस सभा में सम्राट स्वयं पधारे हैं, अब आप ध्यान से उनके मन्तव्यों को सुनें।

६ सम्राट अशोक—भदन्तगण, उपासक और उपासिकाओं मैं यश या कीर्ति को परलोक के लिए बहुत काम की वस्तु नहीं मानता। लोग, जन्म, विवाह, आदि अवसरों पर अनेक मंगल कार्य करते हैं, किन्तु मेरी राय में वे उत्तम फलदायक नहीं हैं। सबसे उत्तम है धर्म मंगल। देश विजय द्वारा कभी स्थायी कीर्ति नहीं प्राप्त की जा सकती है। युद्ध द्वारा कभी शान्ति नहीं स्थापित होती।

शान्ति की प्राप्ति शान्ति द्वारा ही होती है। हमें याद रखना चाहिये कि शान्ति, करुणा और मैत्री दुर्बलों के नहीं शक्तिशालियों के गुण हैं, इसलिए मैंने पृथ्वी जीतने की अपेक्षा मनुष्य का हृदय जीतने का निश्चय किया है। मैं आचार्य तिष्य की धर्म-विजय की योजना को कार्यान्वित

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

करने में अपनी समस्त शक्ति लगा देना चाहता हूँ जो धर्मदूत दूसरे देशों में जा रहे हैं उन्हें अपने उद्देश्य को अच्छी तरह समझ लेना चाहिये। हमारे ये धर्मदूत सारे भारत के दूत बनकर जा रहे हैं शान्ति करुणा और मैत्री का चिरन्तन सन्देश लेकर जा रहे हैं मुझे पूर्ण विश्वास है, तिरत्नानुभाव से ये अपने लक्ष्यतक अवश्य पहुंचेगें।

(धर्मराज अशोक की जय के नारा की गूँज)

५ तिष्य स्थविर—(स्वर कम होने पर) धर्मराज के मन्तव्यों को आपने सुन लिया। अब मैं विभिन्न देशों में जाने वाले संदेश वाहकों के नेताओं के नामों की घोषणा करता हूँ। माध्यमिक स्थविर कश्मीर और गन्धार; महादेव स्थविर महिष्मण्डल; रक्षित स्थविर बनवास; धर्म रक्षित अपरान्त देश; मज्झिम स्थविर हिमवंन्त प्रदेश, शोण और उत्तर स्थविर बर्मा; महेन्द्र स्थविर लंका और महारक्षित स्थविर के नेतृत्व में सीरिया मिश्र अलेज्जेंड्रिया मेसिडोनिया तथा अन्य पश्चिमी एशिया के देश। इनके अतिरिक्त कालान्तर में और देशों में भी प्रचारक-मंडल भेजे जायेंगे। अपने धर्म, संस्कृति, साहित्य और कला का अन्य देशों में प्रचार करते समय स्थानीय परिस्थिति का पूर्णरूप से ध्यान रखना होगा। हमारे प्रचारक कल्याण-कामना से शान्ति का दूत बनकर जा रहे हैं, किसी जाति और देश की अहित कामना से अपने स्वार्थ-साधन के लिए नहीं। सभी प्रचारक मंडल को आदेश दे दिया गया है कि वे जहाँ कहीं जायं उस देश की भाषा और रस्म-रिवाज एवं प्रचलित विश्वासों का पूर्ण समादर करें। इन धर्मदूतों के कार्यों की सूचना समय-समय पर राजकीय घोषणाओं द्वारा आम जनता को दी जाती रहेगी।

(उपस्थित भिक्षुगण निम्न मन्त्रों का पाठ कर धर्मदूतों को आशीर्वाद देते हैं)

सम्मिलित स्वर०:

भवतु सब्ब मंगलं 'रक्खन्तु सब्ब देवता।
सब्ब बुद्धानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते॥
भवतु सब्ब मंगलं रक्खन्तु सब्ब देवता।
सब्बधम्मानुभावेन सदा सोत्थि भवतु ते॥
भवन्तु मंगलं रक्खन्तु सब्ब देवता।
सब्ब संघानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते॥

(राजपथ का कोलाहल)

१ नाग०—अरे भाई, तुमने कुछ सुना?

२ नाग०—क्या कुछ कहोगे तब न?

१ नाग०—तुम्हें याद होगी अशोकाराम में होने वाली तीसरी संगीति।

२ नाग०—हाँ भाई वह दिन किस को नहीं याद होगा। अभी तो पाँच छः वर्ष से अधिक नहीं हुए होंगे। उसी समय से तो धर्मदूत लोग धर्म प्रचार के लिए दूसरे देशों में जाने लगे। पिछले वर्ष तो खबर सुनी थी कि समुद्र के रास्ते जाने वाले धर्मदूतों का एक दल तूफान में फँस कर अपनी जान गँवा दिया।

३ नाग०—लेकिन तारीफ है इन प्रचारकों की, एक दल के बलिदान के बाद दूसरा दल फौरन उसका स्थान ले लेता है। खोतन और नीया की ओर जानेवाले एक के बाद दूसरा दल रेगिस्तान में भटक कर अपने प्राणों की आहुति दे दी। पर इतना सब कुछ होते हुए भी उसी उत्साह से तीसरा दल यहाँ से रवाना हुआ। अब सुना है वह दल निर्दिष्ट स्थान पर सकुशल पहुँच गया है।

१ नाग०—इस सम्बन्ध में एक राजकीय घोषणा भी सामने वाले स्तम्भ पर उत्कीर्ण करायी गयी है।

२ नाग०—अच्छा भाई क्या लिखा है?

२ नागरिक...

ध्यान से सुनो पढ़ता हूँ...

देवताओं के प्रियदर्शी राजा ने जब से धर्म विजय को ही सच्ची विजय स्वीकार किया है, तब से अपने राज्य में तथा सीमान्त प्रदेशों में छः सौ योजन दूर स्थित विदेशी राज्यों, जैसे सीरिया तथा पश्चिमी एशिया का राजा ऐण्टिहाक्स, मिश्र का राजा टालेमी, मेसिडोनिया का राजा ऐण्टिगोनस, साइरीनिका का राजा मागस और एपाइरस का राजा अलेग्जेंन्डर के राज्यों में जाकर भी हमारे धर्मदूतों को अनुपम धर्म विजय प्राप्त हुई है। विष वृजि यवन कंबोज, नाभितियों, भाजा पैठानिकों आदि देशों में तथा लंका और वर्मा में भी देवताओं के प्रिय का धर्मानुशासन माना जाता है। जहाँ देवताओं के प्रिय के धर्मदूत अभी तक नहीं पहुँच पाये हैं, वहाँ लोग भी देवताओं के प्रिय के धर्मवृत्त, धर्म विधान और धर्मानुशासन को अपने राज्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

में सुनकर उसका अनुसरण करते हैं, अब तक जो विजय प्राप्त हुई है उस प्रेम की विजय से आनन्द होता है। मैं चाहता हूँ कि मेरे उत्तराधिकारी भी इस बात को समझ लें कि शस्त्रों द्वारा प्राप्त विजय कभी चिरस्थाई नहीं होती। इसलिए धर्म की विजय को ही सच्ची विजय समझना चाहिये।

(सभी लोग एक स्वर से कह उठते हैं—सम्राट अशोक की जय-धर्मराज अशोक की जय।)

[दृश्य परिवर्तन सूचक संगीत]

वाचक०—सम्राट अशोक के समय बुद्ध की करुणा, मैत्री और शान्ति का चिरन्तन सन्देश सारे भारत का धर्म बन गया। छठी शताब्दी तक जितने आक्रमकों ने भारत पर आक्रमण किया वे सब बुद्ध के इस शान्तिसागर में विलीन हो गये। इन विदेशी आक्रामकों में एक था ग्रीक राजा मेनांडर। ईसवी सन् के लगभग सौ वर्ष पूर्व इसने भारत पर आक्रमण करके सारे उत्तरी भारत पर अधिकार कर लिया। मेनांडर एक विजेता ही नहीं एक महान् तार्किक पंडित भी था। उसे ग्रीक दर्शन और तर्क पद्धति पर बड़ा अभिमान था। वह भारतीय पंडितों के साथ वाद-विवाद करके उन्हें नीचा दिखाता और कहता।

मेनाण्डर०—अरे जम्बूद्वीप तुच्छ है, झूठमूठ इसका इतना नाम है, यहाँ कोई भी ऐसा श्रमण या ब्राह्मण नहीं जो मेरे साथ बातचीत कर सके। यदि कोई है तो उसको बुलाओ।

सरदार०—महाराज ठहरें, नागसेन नाम के एक बौद्ध पण्डित यहीं संखेय्य विहार में ठहरे हुए हैं। आप उनके पास आयें और प्रश्न पूछें, वे आपकी शंकाओं को दूर कर देंगे।

[रथ पर सवार हो मेनांडर संखेय्य विहार पहुँचता है, (रथ चलने का स्वर) भिक्षु नागसेन प्रवचन कर रहे हैं, राजा के आगमन को देख श्रोता परस्पर काना-फूसी करते हैं—यह वितण्डावादी राजा यहाँ भी आ पहुँचा,··· म्लेच्छ है न ?···भारतीय पण्डितों का बड़ा अपमान करता है···चुप रहो आ ही तो गया।]

मेना०—भदन्त नागसेन को मेनाण्डर नमस्कार करता है।

नाग०—महाराज का कल्याण हो।

मेना०—भन्ते, आप किस नाम से जाने जाते हैं, आपका शुभ नाम ?

नाग०—महाराज मैं नागसेन के नाम से जाना जाता हूँ, पर महाराज, यह तो व्यवहार करने के लिए संज्ञा भर है। यथार्थ में इस नाम का कोई एक पुरुष नहीं है।

मेना०—भन्ते नागसेन, यदि कोई पुरुष नहीं है तो कौन आपको भोजन और वस्त्र देता है, और कौन उसका उपयोग करता है ? क्या आपके ये केश, नख, दाँत, चमड़ा, मांस, मस्तिष्क आदि नागसेन है ?

नाग०—नहीं महाराज,

मेना०—भन्ते, तो क्या रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान नागसेन हैं ?

नाग०—नहीं महाराज।

मेना०—तब आप झूठ बोलते हैं कि नागसेन कोई नहीं है।

नाग०—महाराज आपका शरीर बहुत सुकोमल है, क्या आप यहाँ तक पैदल चलकर आये हैं ?

मेना०—नहीं भन्ते, मैं रथ पर चढ़कर आया हूँ।

नाग०—अच्छा तो आप रथ पर चढ़कर आये हैं, महाराज, क्या यह धूरी रथ है ?

मेना०—नहीं भन्ते !

नाग०—यह चक्का, जूआ, चाबुक, रथ है।

मेना०—नहीं भन्ते, ये रथ नहीं हैं।

नाग०—महाराज, मैं पूछते-पूछते थक गया किन्तु यह पता नहीं लगा कि रथ क्या है। आप सारे जम्बूद्वीप के सबसे बड़े राजा हैं, फिर किसके डर से जवाब नहीं देते।

मेना०—भन्ते नागसेन, आपने तो मुझे आश्चर्य में डाल दिया।

नाग०—महाराज, जैसे विभिन्न अवयवों के आधार पर रथ संज्ञा दी गई वैसे ही विभिन्न स्कन्धों के होने से एक प्राणी समझा जाता है।

मेना०—भन्ते, नागसेन, आश्चर्य है, अद्भुत है, इस जटिल प्रश्न को आपने बड़ी खूबी के साथ सुलझा दिया।

(दर्शकों की ओर से साधु-साधु-साधु—की आवाज

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गूँज उठती है, कानाफूसी होने लगती है, वाह, वाह, खूब जबाब दिया ।)

वाचक०—ग्रीक राजा मेनांडर, और भिक्षु नागसेन के बीच कई दिनों तक वाद-विवाद होता रहा । राजा ने कुल तीन सौ चार प्रश्न पूछा । भिक्षु नागसेन ने बड़ी खूबी के साथ सबका उत्तर दिया । राजा का सारा अभिमान चूर-चूर हो गया । अन्त में हाथ जोड़कर वह बोला…

मेना०—भन्ते नागसेन, मेरे अपराधों को क्षमा करें, जीवन के भारतीय आदर्श को अब तक मैंने नहीं समझा था । सचमुच भारत कितना महान है । यहाँ मनीषियों के विचारों की उच्चता को समझना आसान नहीं । अब तक मैं अँधेरे में टटोल रहा था । आपने भगवान् तथागत द्वारा प्रज्वलित निर्मल प्रकाश के सहारे मेरा मार्ग दर्शन किया । त्रिशरण प्रदान कर आज से लेकर जीवनपर्यन्त मुझे बुद्ध धर्म और संघ का उपासक स्वीकार करें ।

नाग०—बुद्धं सरणं गच्छामि ।

मेना०— ,, ,,

नाग०--धम्मं सरणं गच्छामि

मेना०--संघं सरणं गच्छामि

मेना०— ,, ,,

वाचक—इसके बाद नागसेन स्थविर की प्रेरणा से मेनांडर की श्रद्धा और भी बढ़ी, अन्त में राज्य भार अपने पुत्र को सौंप वह भारनीय आदर्श के अनुसार भिक्षु बन गया । इस ग्रीक राजा ने भारतीय संस्कृति के प्रसार और अभिवृद्धि के लिए बहुत प्रयत्न किया । दूर दूर के देशों में उसने अनेक विहार और स्तूप निर्माण कराया । पश्चिमी देशों के विचारों और विश्वासों में आज हम जो भारतीयता का प्रभाव पाते हैं, उसका मेनांडर द्वारा प्रेषित धर्मदूतों को ही है ।

(हृदय परिवर्तन सूचक संगीत
(वीणा पर दो तीन पुरुष सस्वर गाते हैं)

तस्मिन्वने श्रीमति राजपत्नी प्रसूतिकालं समवेक्षमाणा शय्यां वितानोपहितां प्रदेशे नारी सहस्रै, रभिनन्द्यमाना ततः प्रसन्नश्च बभूव पुष्यस्तस्याश्च देव्या व्रतसंस्कृतायाः पष्त्यात्सुता लोक हिताय जज्ञे निवेदनं चैव निरामयं च दीप्त्या च धैर्मेण च यो रराज वालौ रविर्भूमिमिवावतीर्णः । तथापि दी प्तौऽपि निरीक्ष्यमाणा जहार चक्षंपि यथा शशांकः

(संगीत तिरोहि होता है, सभासद लोग परस्पर बोल रहे हैं·—महाराज पधार रहे हैं, महाराज श्री आ गये'…

महाराज कनिष्क की जय…धर्मराज कनिष्क की जय)

कनिष्क०—भदन्तगण एवं उपस्थित सज्जनो, भगवान् तथागत की असीम अनुकम्पा के फलस्वरूप ही इस चतुर्थ धर्म संगीति का आयोजन पूरा हो सका । यद्यपि मेरे पूर्वज तथागत के पद रज से पूत भारत भूमि के नहीं थे । फिर भी इसी को अपनी मातृभूमि स्वीकार किया । जम्बूद्वीप पर आधिपत्य स्थापित करने वाले प्रथम कुषाण सरदार कुजुल कराल एक धर्मनिष्ठ बुद्ध भक्त थे । मैं स्वयं दुर्भाग्यवश प्रारंभिक वर्षों में धर्म विमुख रहा । मैं ने अनेक देशों का विजय किया, किन्तु अपने आप पर विजय नहीं प्राप्त कर सकने के कारण सदा दुखी और भयभीत ही रहा । काशार, यारकन्द और खोतन के युद्धों में जो भीषण रक्तपात हुआ उसकी कल्पनामात्र भयावह है । महास्थविर पार्श्व ने मुझ जैसे भूले को सच्चा मार्ग दिखाया । अंधे को सीधा किया, अशान्त को शान्त किया, और उन्हीं की प्रेरणा से यह चतुर्थ संगीति प्रारंभ हो रही है । आशा है राज्य की श्रद्धालु जनता देश विदेश से आने वाले अतिथियों का हृदय से स्वागत करेगी ।

(धर्मराज कनिष्क की जय के नारे)

स्थविर०—भदन्तगण, कल प्रातः काल से चतुर्थ संगीति में त्रिपिटक के साथ-साथ उस पर लिखे गये भाष्यों का भी संगायन और संपादन होगा । विभिन्न राष्ट्रों के पाँच सौ चुने हुए विद्वान भिक्षु भाग ले रहे हैं । अध्यक्ष का आसन महापंडित वसुमित्र और उपाध्यक्ष का महाकवि अश्वघोष ग्रहण करेंगे । धर्मनिष्ठ महाराज के निश्चयानुसार विभाषा शास्त्र सहित सारा त्रिपिटक ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण कराकर प्रस्तर मंजूषा में रख दो सौ छियासठ हाथ ऊँचे परम पवित्र-स्तूप में प्रस्थापित किया जायेगा, ताकि युगयुगान्त तक भगवान् तथागत का चिरन्तन संदेश पृथ्वी पर वर्तमान रह सके । संगीतिकी समाप्ति के पश्चात् विजित एवं अविजित सुदूर देशों में जो सन्देशवाहक जायेंगे, वे इस साहित्य की प्रतियाँ भी अपने साथ ले जायेंगे ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(कोलाहल धर्मराज कनिष्क की जय के नारों की गूँज; फिर तस्मिवने श्रीमति···का पाठ धीरे-धीरे समाप्त होता है :)

अश्वघोष—पूर्वनिश्चयानुसार चतुर्थ संगीति की आज विधिवत् समाप्ति की घोषणा की जाती है। इस पावन अवसर पर मैं उन संदेशवाहकों के लिए जो अपनी प्यारी मातृभूमि की समस्त ममता को छोड़ दूर देशों में धर्म प्रचार के लिये जा रहे हैं, मंगल कामना करता हूँ, भारतीय भिक्षु-संघ और भारतीय जनता की सहानुभूति सदा आप धर्मदूतों के साथ है। तथागत की निर्मल वाणी को आप समस्त भारत की वाणी के रूप में विश्व को सुनावें त्रिरत्नानुभाव से आप अपने लक्ष्य तक पहुँचने में अवश्य सफल होंगे।

(साधु, साधु, साधु, महाराज कनिष्क की जय!)

[दृश्य-परिवर्तन सूचक संगीत]

घंटे का गम्भीर स्वर तिरोहित होता है, सूत्रपाठ सुनाई पड़ता है: नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स। इतिपि सो भगवा अरहं सम्मा सम्बुद्धो विज्जाचरण सम्पन्नो सुगतो लोकविदु अनुत्तरो पुरिसदम्म सारथी सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवाति।)

(तीरोहित होता है)

१ नाग०—क्यों बाबा, आप भी तैयार हो रहे हैं।

२ नाग०—(वृद्धावस्था के स्वर में) क्यों नहीं बेटा, मैं तो प्रयाग के इस मेले में तब से जा रहा हूँ, जब से महाराज ने इसका प्रारम्भ किया। तुम भी क्यों नहीं चले चलते बेटा?

३ नाग—हम लोग भी वहीं चलने के लिए तैयार होकर आये हैं बाबा, चलें हम सब साथ चलें।

२ नाग०—चलो बेटा, बड़ी प्रसन्नता की बात है, यात्रा में दो चार जने साथ रहने पर ही अच्छा होता है।

(सब लोग एक साथ प्रस्थान करते हुए महाराज हर्ष की जय, का नारा लगाते हैं)

नाग०—बाबा आप क्यों वृद्ध हैं, सब कुछ अपनी आँखों से देख चुके हैं, प्रयाग के त्रिवेणी संगम पर लगने वाले इस मेले का क्या उद्देश्य है।

२ नाग०—बेटा, हमारे सम्राट हर्षवर्धन एक रण कुशल योद्धा ही नहीं, वे धर्म के सच्चे ज्ञाता भी हैं। जहाँ राजनैतिक दृष्टि से उनकी बुद्धि अत्यधिक पैनी है, वहीं काव्यशास्त्र के भी अनुपम मर्मज्ञ हैं। मैं उनके साथ कितने युद्धों में भाग ले चुका हूँ। पूरे छत्तीस वर्षों तक संघर्ष करने के पश्चात आज सारा भारत राजनैतिक और सांस्कृतिक दृष्टि से एक हो सका है। विभिन्नताओं में एकता ही भारतीय धर्म और संस्कृति की विशेषता रही है और हमारे सम्राट इसके प्रतीक हैं।

१ नाग०—यह कैसे बाबा?

२ नाग०—हमारे सम्राट हर्ष भगवान बुद्ध के अनन्य भक्त हैं, किन्तु सूर्य और शिव का भी आदर करते हैं। वे राज्य 'सुख के लिए नहीं, सेवा के लिए करते हैं। भगवान तथागत के लोक हितकारी धर्म के वे सच्चे अनुयायी हैं। इसी त्रिवेणी संगम के मेले को लो। यह हर पाँचवें वर्ष होता है। सभी धर्म और सम्प्रदाय के लोग यहाँ एकत्रित होते हैं। महाराज स्वयं इस समारोह में पधारते हैं। वे अपना सर्वस्व याचकों को भेंटकर देते हैं।

१ नाग—सुना है बाबा, इसमें देश-विदेश से लोग आते हैं।

२ नाग०—हाँ बेटा, पिछले बार चीन देश के एक महान विद्वान युवानच्चांग भी पधारे थे। इस यात्री से महाराज की भेंट उत्कल विजय से लौटते समय हुई थी। उन्हें वे अपने साथ ही कन्नौज ले आये। वहाँ २१ दिनों तक एक परिषद चलती रही। इस परिषद की कार्यवाही में चार हजार बौद्ध भिक्षु, और तीन हजार जैन एवं ब्राह्मण विद्वानों ने भाग लिया। इस परिषद के अध्यक्ष चीन के विद्वान् यात्री युवानच्चांग थे। महाराज ने अपने ही आकार की सोने की एक बुद्ध प्रतिमा बनवाई जो छियासठ हाथ ऊँचे एक विशाल विहार में प्रस्थापित की गयी।

१ नाग०—बाबा, चीन देश वे विद्वान अब कहाँ रह रहे हैं?

२ नाग०—वे वापस अपने देश चले गये, चीन देश के लोग भी भगवान तथागत के ही धर्म का पालन करते हैं। पहले भी कितने ही चीनी विद्वान बुद्ध-धर्म के अध्ययन के लिए भारत आ चुके हैं। प्रत्येक भारतीय भगवान बुद्ध के धर्म का उत्तराधिकारी है। इस नाते महाराज ने चीनी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यात्री का बड़ा स्वागत किया। जो बौद्ध ग्रन्थ चीन में नहीं मिलते वे सब उन्हें प्रदान किया गया। अनेक दुर्लभ मूल्यवान बुद्ध प्रतिमायें भी भारत की ओर से चीन को उपहार स्वरूप भेजी गयी हैं। इन सब उपहारों को सुरक्षित चीन तक पहुँचाने के उद्देश्य से कामरूप के राजा भास्कर वर्मा एक सैन्यदल के साथ सीमान्त प्रदेश तक पहुँचा आये।

३ ना० : और नालन्दा महाविहार के संरक्षक भी तो हमारे महाराज ही हैं।

नाग० : नालन्दा महाविहार की बात मत पूछो। वहाँ इस समय दस हजार छात्र और पन्द्रह सौ अध्यापक हैं। संसार के विभिन्न देशों से यहाँ छात्र आते हैं। चीन कोरिया, लंका, वर्मा, जावा, सुमात्रा, आदि देशों के सैकड़ों छात्र अध्ययन कर रहे हैं। हमारे महाराज हर्ष ही उसके संरक्षक और संचालक हैं। भारतीय ज्ञान विज्ञान का समस्त संसार में प्रचारित करने का श्रेय नालन्दा महा विहार को ही है।

(सभी ओर शान्ति है, नालन्दा महाविहार के भिक्षुगण सूत्रपाठ कर रहे हैं)

ओं नमो। बुद्धाय

अनाकुलान्यच्ज स मुद्रतानि निष्पेषच्छृव्यायत विक्रमाणि।
तथैव धीराणि पदानि सप्त सप्तर्षितारा सदृशी जगाम॥
बाधाय जातास्मि जगद्धितार्थमन्त्या भवोत्पत्तिरियं नमेति।
चतुर्दिशं सिंहनतिर्वेलोक्य वाणीं च भव्यार्थकरी मुवाच॥

(सूत्रपाठ तिरोहित होता है)

संघनायक—

भदन्तगण को ज्ञात होगा कि तिब्बत के सम्राट की ओर से नालन्दा महाविहार के संघनायक के नाम पत्र लेकर एक दूत मंडल यहाँ आया हुआ है। पत्र में लिखा है···नालन्दा महा विहार के संघनायक एवं समस्त भिक्षु संघ को तिब्बत के अधिपति और प्रजा की ओर से करबद्ध नमस्कार है। पिछले दो सौ वर्षों से हमारे पूर्वज और हमारी प्रजा बुद्ध धर्म और संघ में श्रद्धा रखती आ रही है। किन्तु एक के बाद दूसरी ऐसी विपरीत परिस्थितियाँ आती रहीं कि अभी तक तिब्बत में समुचित रूप से धर्म की स्थापना नहीं हो सकी है। मैंने और मेरे पूर्वजों ने अनेक बार तिब्बती तरुणों को धर्म के अध्ययन के लिए भारत भेजा. किन्तु प्रतिकूल जलवायु के कारण अधिकांश लोग जान से हाथ धो बैठे। इसलिए मैं चाहता हूँ कि नालन्दा महा विहार से कुछ धर्मज्ञ विद्वान् तिब्बत आकर सद्धर्म को चिरस्थाई बनाने में योग प्रदान करें।

१ भिक्षु : आदरणीय भदन्त, कुछ समय पूर्व प्रत्यन्त देश वासी एक भिक्षु से मैंने सुना था कि तिब्बत का जीवन अत्यधिक कठिन है। सालभर शीत ऋतु रहता है। देश का अधिकांश भाग हिमाच्छादित है। वहाँ के निवासियों का रहन-सहन खान-पान वेशभूषा, हमसे बिलकुल भिन्न है। वहाँ की भाषा अति दुरूह है, देश में पढ़े लिखे लोगों की संख्या नगण्य सी है। ऐसी परिस्थित में वहाँ धर्म प्रचारार्थ जाना अति दुष्कर कार्य है। हमारे वयोवृद्ध आचार्य शान्तिरक्षित तिब्बत से हो आये हैं। और उनसे पुनः वहाँ आने का आग्रह भी किया गया है। इस विषय में उनका विचार जानना आवश्यक है।

आ० शान्तिरक्षितः—

भदन्तगण, मेरी आयु इस समय ७५ वर्ष की हो चुकी है, किन्तु त्रिरत्नानुभाव से मैं वाहर और भीतर से पूर्ण स्वस्थ हूँ। आप सबको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मैंने पुनः तिब्बत जाने का निश्चय कर लिया है। तिब्बत की कठिनाइयों को औरों की अपेक्षा मैं अधिक जानता हूँ। पर तथागत का आदेश मेरे सामने है। यदि कष्ट और विपत्ति से भारतीय डरे होते तो आज समस्त ज्ञात जगत में आर्यधर्म और संस्कृति का प्रसार हम अपनी आँखों नहीं देख पाते। उत्तुंग हिमालय की चोटियाँ हमारे मार्ग में बाधक नहीं हो सकतीं, हमें उन्हें पार करना होगा, हमारे सामने बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय का उच्चादर्श, आत्मोत्सर्ग करनेवाले अनेक बोधिसत्वों और बुद्धों का उदाहरण मौजूद हैं। भगवान् तथागत के परिनिर्वाण प्राप्त किये लगभग तेरह सौ वर्ष बीत चुके हैं। इस बीच उनके चिरन्तन सन्देश को देशान्तरों तक पहुँचने के लिए सैकड़ों हजारों भारतीय कुलपुत्रों ने अपने प्राणों की आहुति दी है। हमें उस महान परम्परा को कायम रखना होगा। आज से आठ दिन बाद मैं तिब्बत के लिए प्रस्थान करूँगा, जब तक वहाँ अच्छी तरह सद्धर्म की स्थापना नहीं हो जाती।

(नालन्दा महाविहार के भिक्षुगण मंगल कामना करते हुए सूत्रपाठ करते हैं)

भवतु सब्ब मंगलं रक्खन्तु सब देवता।
सब्ब बुद्धानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते॥
भवतु सब्ब मंगलं रक्खन्तु सब्ब देवता।
सब्ब धम्मानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते॥
भवन्तु सब्ब मंगल रक्खन्तु सब्ब देवता।
सब्ब संघानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बुद्धधर्म की सार्वभौम शिक्षा से ही विश्व का कल्याण

३० अप्रैल को सारनाथ के मूलगन्ध कुटी विहार में सायंकाल ४ बजे महाबोधि सभा की ओर से बुद्धजयन्ती मनायी गयी। उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्री आचार्य युगलकिशोर की अनुपस्थिति में सभा भिक्षु जगदीश काश्यप के सभापतित्व में सम्पन्न हुई।

महाबोधि-सभा के मन्त्री भिक्षु एम० सङ्घरत्न ने अतिथियों तथा श्रोताओं का स्वागत करते हुए त्रिविध पावनी बुद्ध पूर्णिमा के महत्व पर प्रकाश डाला। आपने बतलाया कि इसी दिन भगवान् बुद्ध अवतरित हुए, इसी दिन उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ तथा आजके ही दिन कुशीनगर में उनका महापरिर्वाण हुआ।

सभापतिपद से भिक्षु जगदीश काश्यप ने अपने भाषण में कहा कि अच्छी बातें जितनी बार कही और सुनी जायँ उतना ही अच्छा है। तथागत के उपदेश भी ऐसे ही हैं। आजका दिन केवल भारत के लिए ही नहीं, अपितु समस्त बौद्धजगत के लिए बहुत ही महत्व का है। अन्य बौद्ध देशों में तो दिनको और भी उत्साह के साथ मनाते हैं। भगवान् ने हमारे सामने ऐसा मार्ग प्रशस्त किया जिसके द्वारा हम अपनी कमजोरियों पर विजय प्राप्त कर सकते हैं और हमारा मार्ग मङ्गलमय बन सकता है। भगवान् का मार्ग सभी के लिए कल्याण का मार्ग था। आज के भगवान् बुद्ध का मार्ग ही उत्तम मार्ग है और उनके बताये उपदेशों के अनुसार आचरण करके ही हम संसार का कल्याण कर सकते हैं।

सभामें श्री फौजदार सिंह तथा मेरठ की बौद्ध उपासिका शीला देवी के भी भाषण हुए। सभा की कारवाई भिक्षु सङ्घरत्न द्वारा धन्यवाद प्रकाश तथा भिक्षुओं द्वारा सूत्रपाठ के बाद समाप्त हुई। सभा प्रारम्भ होने के पूर्व प्राइमरी स्कूल के विद्यार्थियों ने प्रार्थना की। प्रातःकाल सारनाथ स्थित अस्पतालों में रोगियों को महाबोधि सभा की ओर से फल दिया दया।

इसके पूर्व दोपहर में भोजन-दान दिया गया। रात्रि में मूलगन्ध कुटी विहार तथा बोधि-वृक्ष दीपमालाओं से सुशोभित थे।

कुशीनगर में बुद्ध जयन्ती—३० अप्रैल को सायंकाल ४ बजे वैशाख पूर्णिमा के अवसर पर तथागत की परिनिर्वाण भूमि कुशीनगर में जिलाधीश श्री शिरोमणि शर्मा के सभापतित्व में बुद्ध जयन्ती मनाई गई। भदन्त चन्द्रमणि महास्थविर ने पञ्चशील की व्याख्या करते हुए उसके पालन के महत्व पर प्रकाश डाला।

कुशीनगर भिक्षुसंघ के मंत्री भिक्षु धर्मरक्षित ने अपने स्वागत भाषण में कहा कि आज की ही तिथि में भगवान् बुद्ध का जन्म, बुद्धत्व-प्राप्ति एवं महापरिनिर्वाण हुआ था, इसीलिए इस तिथि को हम परम पवित्र मानते हैं।

इस अवसर पर उपस्थित पत्रकारों आदिका स्वगत करते हुए आपने भगवान् बुद्ध के प्रमुख कार्यक्षेत्रों का उल्लेख कर कहा कि लोभ, मोह, द्वेप का परित्याग कर मानव कल्याण की बात सोचना, तदनुकूल आचरण करना ही मनुष्यता है। उसी से मनुष्य देवत्वकी ओर जा सकता है। बौद्ध धर्म पर चलकर समूचे विश्व का कल्याण किया जा सकता है।

श्री अक्षयकुमार कर्ण ने तथागत के प्रति अपनी श्रद्धा-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अलि अर्पित करते हुए भगवान् बुद्ध के विधेयात्मक स्वरूप को कार्यात्मक रूप देने का अनुरोध किया

बुद्धडिग्री कालेज के प्रधानाचार्य श्री रमाशंकरनाथ त्रिपाठी ने तथागत के उपदेशों को अपनाने का अनुरोध किया।

विधायक श्री उग्रसेन सिंह ने अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए कहा कि तथागत के उपदेशों को अमल में लाने से ही शान्तिस्थापन हो सकती है। जिलाधीश के भाषण के बाद कार्यक्रम समाप्त हुआ।

२९—अप्रैल को सायंकाल जुलूस के साथ बुद्ध-पूजा हुई। तदुपरान्त भिक्षु धर्मरक्षित का प्रवचन हुआ एवं उपस्थित लोगों को मिष्टान्न प्रदान किया गया।

बुद्धगया में बुद्धजयन्ती—बुद्धगया में बुद्धजयन्ती समारोहपूर्वक मनाई गयी। ६ बजे प्रातः बोधगया स्थित तिब्बती मठ से एक शोभायात्रा निकाली गयी। इस शोभायात्रा में तिब्बत से लाये गये अपने देश के बने जरी के वस्त्रों को पहने तिब्बती बाजे के साथ सम्मिलित थे। इसमें चीन, श्याम, कम्बोडिया, बर्मा, लङ्का तथा अन्य बौद्ध देशों के भिक्षु हाथ में धूपबत्ती लिये तथा मन्त्रोच्चारण करते चल रहे थे। उनके पीछे-पीछे लंका देश के बौद्ध यात्रीगण श्वेत वस्त्रों में हाथों में मंगलघट तथा प्रसाद के सामान लिये थे।

शोभायात्रा १७० फुट ऊँचे मन्दिर की परिक्रमा कर पवित्र बोधिवृक्ष के नीचे समाप्त हुई, जहाँ शाक्यमुनि को ज्ञानप्राप्ति हुई थी। वहाँ पर विभिन्न देशों के भिक्षुओं ने पूजा की। सभी उपस्थित उपासकों ने पञ्चशील का पाठ किया। जिस समय शोभायात्रा यहाँ पहुँची, बोधगया मन्दिर का सारा प्रांगण घण्टों की ध्वनि और शंखों की गूँज से गूँज उठा।

प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी बोधगया मन्दिर प्रबन्धकारिणी समिति द्वारा कई दिनों पहले से ही इस समारोह के मनाने की व्यापक तैयारियाँ की जा रही थीं। इस अवसर पर बुद्ध मन्दिर का सारा प्रांगण बौद्धधर्म के झण्डों तथा पताकाओं से बड़े ही कलात्मक ढंग से सजाया गया था।

संध्या समय भगवान् बुद्ध की जीवनी के आधार पर एक मनोरंजक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया, जो बड़ा ही सफल रहा।

इस अवसर पर बाहर से आये हुए श्याम, लंका के बौद्ध भिक्षुओं ने बुद्ध भगवान् के उपदेशों को बताया। जिलाधीश ने भाषण करते हुए कहा कि इस विज्ञान के युग में भी विश्व में शान्तिस्थापना करने के लिए भगवान् बुद्ध द्वारा बताये गये अहिंसा के मार्ग को अपनाना अति आवश्यक है और इसी से मानव जाति का कल्याण हो सकता है। भगवान् बुद्ध ने भी अहिंसा के बल पर अपने उपदेशों को सारे भूमण्डल में फैलाया और इसीसे बौद्ध धर्म का काफी प्रचार हुआ।

दिल्ली में जयन्ती समारोह—नई दिल्ली, ३० अप्रैल। राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने आज बुद्ध पूर्णिमा के अवसर पर बौद्ध विहार में आयोजित समारोह में भाषण देते हुए कहा कि हमें समाज सुधार के बारे में भगवान् बुद्ध की क्रान्तिकारी मनोवृत्ति को अपनाना चाहिए।

राष्ट्रपति ने कहा कि भगवान् बुद्ध के उपदेश की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह शाश्वत है। अर्थात् उसमें कुछ ऐसे तत्व हैं जो उसे देश-काल के ऊपर उठाते हैं। उनके दिव्य उपदेश और शिक्षा में कही गई बहुत-सी बातें आज भी उतनी ही सच और सारगर्भित हैं जितनी वह उनके जीवनकाल में रही होंगी। व्यक्ति और समाज के उच्चतम लक्ष्य के बारे में भगवान् बुद्ध का विश्लेषण इतना ठीक और स्पष्ट है कि ढाई हजार वर्षों की घटनाएँ उसे धूमिल नहीं कर पाई है।

भगवान् बुद्ध के जीवन का महत्वपूर्ण पहले उनकी क्रान्तिकारी मनोवृत्ति है। जिस समाज में उनका जन्म हुआ और जिसमें उनका पालन-पोषण हुआ उसके प्रति उनके मन में घोर असन्तोष था। समाज सुधार सम्बन्धी बहुत से ऐसे विचार हैं जिनसे आज सभी परिचित हैं किन्तु जो सम्भवतः संसार में पहली बार भगवान् बुद्ध की वाणी द्वारा व्यक्त हुए। यह ठीक है कि सामाजिक न्याय, स्त्री-पुरुष की समानता, सदाचार, जाति-पाँति का विरोध, मिथ्या भ्रान्तियों, व्यर्थ के रीति-रिवाजों, पाखण्डों और आडम्बरों आदि के सम्बन्ध में भगवान् बुद्ध ने जो कुछ कहा वह किसी न किसी रूप में पूर्ववर्ती परम्परा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथवा धार्मिक साहित्य में विद्यमान था. किन्तु बुद्ध ने इन आदर्शों को विशेष महत्व देकर ऐसे रूप में सूत्रबद्ध किया जिससे वे आसानी से समझ में आ सकें और जन-साधारण उनका अनुसरण कर सके। भगवान् बुद्ध का मुख्य ध्येय बहुजनहित अथवा लोक कल्याण था।

भगवान् बुद्ध का वह वाक्य फिर स्मरण हो आता है जो उन्होंने जीवन-दीप बुझने से पहले अपने प्रिय शिष्य आनन्द से कहा था। दुखी आनन्द को सान्त्वना देते हुए तथागत ने कहा था "आनन्द अपने दीपक आप बनो।" उनकी धारणा थी कि प्रत्येक व्यक्ति अपना मार्ग आप प्रशस्त कर सकता है। मानव को किसी पर निर्भर न रह कर अपना कल्याण आप करना चाहिए।

इस अवसर पर श्रीलंका के उच्चायुक्त सर रिचर्ड अलु विहारे ने कहा कि श्रीलंका बौद्ध धर्म के बारे में भारत का चिर ऋणी है। कम्बोडिया के राजदूत श्री थोंग हेम ने भी भाषण किया।

श्री जुगलकिशोर बिड़ला ने अपने भाषण में कहा कि सरकार को शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा भी देनी चाहिए। श्री बिड़ला ने कहा कि विश्व के अन्य राष्ट्र भारत को धर्म-प्रधान देश समझते हैं। अतः शिक्षा प्रणाली को धार्मिक बनाने के लिए निरन्तर प्रयत्न किया जाना चाहिए।

बम्बई में बुद्धजयन्ती—बम्बई में वैशाखी पूर्णिमा के अवसर पर विभिन्न स्थानों एवं बुद्ध-मन्दिरों में बुद्ध जयन्ती समारोह मनाये गये।

महाराष्ट्र के राज्यपाल श्री श्रीप्रकाश, मेयर श्री बोर्लीकर जापानी वाणिज्य दूत श्री यौशिओका, लंका के वाणिज्य आयुक्त श्री ए० एच० जयसिंह प्रभृति ने विभिन्न समारोहों में भाग लिया।

भारतीय बौद्ध सभा द्वारा ग्रीनपार्क में आयोजित सभा में श्री श्रीप्रकाश ने अपने भाषण में कहा—आज से अधिक पहले कभी भारत के इतिहास में बौद्ध-उपदेशों के व्यवहार की इतनी जरूरत न थी। बुद्ध का मुख्य उपदेश प्रेम एवं सद्भावना का है। आज की दुनिया में इसकी बड़ी जरूरत है जहाँ मानवता के समक्ष विनाशकारी ढङ्ग के झगड़े प्राप्त हैं।

राज्यपाल ने भगवान् बुद्ध और दिवंगत डाक्टर अम्बेडकर के चित्रों को मालाएँ पहनायी और कहा कि श्री अम्बेडकर ने अछूतों की महान सेवा की।

साँची में—३० अप्रैल को रात्रि में ८ बजे साँची के चैत्यगिरि विहार में महाबोधि सभा की ओर से जिलाधीश श्री मुक्तेश्वर सिंह के सभापतित्व में बुद्धजयन्ती मनाई गयी। उक्त अवसर पर छात्रों के प्रतियोगितात्मक भाषण हुए जिन्हें पुरस्कार भी प्रदान किया गया।

जिलाधीश के भाषण के उपरान्त भिक्षु एस० आनन्द ने उपस्थित लोगों को धन्यवाद दिया। सभा का आयोजन रेलवे स्टेशन के पास विश्रामगृह के सन्निपात-भवन में किया गया था।

सोहगी बरवा में—सोहगी-बरवा शिकारपुर ग्राम में गत २७ अप्रैल को बुद्ध जयन्ती मनायी गयी।

प्रातः भगवान् बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित भजन गाते हुए स्थानीय स्कूल के बच्चों ने गाँव की परिक्रमा की। तत्पश्चात भगवान् बुद्ध की रथयात्रा निकाली गयी।

अपराह्न में अन्तरिम जिला परिषद के उपाध्यक्ष श्री हरिशंकर प्रसाद गुप्त की अध्यक्षता में एक सभा हुई।

श्री गुप्त ने इस अवसर पर भाषण करते हुए बुद्ध के पवित्र सिद्धान्त, प्रेम और अहिंसा के मार्गपर चलने का आवाहन किया।

अतिरिक्त जिला सूचना अधिकारी तथा खण्ड-विकास अधिकारी ने भी भाषण किया।

इस जयन्ती का आयोजन भिक्षु प्रज्ञावंश ने की थी।

श्रावस्ती में बुद्ध जयन्ती—वैशाख पूर्णिमा को श्रावस्ती में बुद्ध जयन्ती बड़े समारोह के साथ मनायी गयी। इस अवसर पर एक त्रिदिवसीय मेले का आयोजन किया गया। श्री गांधी स्मारक निधि के व्यवस्थापक श्री चन्द्रभूषण पाण्डेय शास्त्री ने मेले का शुभारम्भ भगवान् बुद्ध की मूर्ति का अनावरण करके किया। इस मेले में इकौना के आस-पास के हजारों लोग एकत्रित हुए थे। इस वर्ष मेले का आयोजन बहराइच जिला द्वारा किया गया था। बाहरी दुकानों के अतिरिक्त सरकारी स्टाल भी लगाये गये थे। जिला उद्योग विभाग, गाँधी आश्रम के स्टाल सुन्दर थे। प्रदेशीय हरिजन कल्याण विभाग की ओर से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एक प्रचार यान भी आया था जिसके द्वारा चलचित्र प्रदर्शित किया गया। युवक मङ्गल दल की ओर से खेलकूद के आयोजन किये गये थे। जिला नियोजन अधिकारी श्री मोहनचन्द्र जोशी, कृषि अधिकारी श्री रावत, सूचना अधिकारी श्री अक्षयबरलाल शास्त्री, उद्योग अधिकारी श्री राधेश्याम, हरिजन कल्याण अधिकारी श्री भारतीभूषण भी इस मेले को सफल बनाने के लिए उपस्थित थे।

नौगढ़ में जयन्ती समारोह—भारत सेवक समाज द्वारा आयोजित बुद्ध जयन्ती कार्यक्रम यहाँ सफलता-पूर्वक सम्पन्न हुआ। स्थानीय जनता के अतिरिक्त अन्य प्रदेश और विदेश से आये हुए अनगिनत बौद्ध भिक्षुओं ने भगवान् बुद्ध की जन्म-भूमि लुम्बिनी पहुँच कर अपनी स्नेहप्लावित श्रद्धांजलियाँ अर्पित की। नेपाल राज्य की ओर से यात्रियों के सुख और सुविधा हितार्थ आवश्यक प्रबन्ध किये गये थे।

नौगढ़ में एक ओर तो मद्यनिषेध विभाग, स्वास्थ्य विभाग, सूचना विभाग अपने प्रदर्शन कक्षों में जनता के अन्दर जागरुकता, योजना सम्बन्धी विविध प्रचार-प्रसार में व्यस्त थे ही जो दूसरी ओर बालकों की रङ्ग-बिरङ्गी टोलियाँ अपनी खेल-कूद, अन्य प्रकार के विभिन्न मनोरंजक कार्यक्रमों से जनता को उत्साह और नयी जिन्दगी प्रदान कर रहे थे। द्विदिवसीय उक्त समारोह के प्रमुख आकर्षण बर्मा और सीलोनसे आये हुये बौद्ध भिक्षुओं के बौद्धिक और सूचना विभाग के चल चित्र प्रदर्शन थे। प्रतिदिन लगभग पाँच हजार जनता ने, जो गाँव-गाँव से चलकर उक्त समारोह में सम्मिलित हुई थी, उक्त विभिन्न आयोजनों से लाभ उठाया। यद्यपि आवश्यक कार्यों के कारण भारत सरकार और प्रदेश सरकार के मन्त्रीगण जिनका वहाँ पहुँचना सुनिश्चित था, न पहुँच सके फिर भी अनेक मन्त्रियों, विदेशोंके विशिष्ट व्यक्तियोंके सन्देश और श्रद्धांजलियाँ, जिन्हें समारोह में जनता को पढ़कर सुनाया गया, आयोजन को सफल बनाने में सफल सिद्ध हुए।

काठमांडू में बुद्धपूर्णिमा—बुद्ध जयन्ती के अवसर पर बुद्ध पूर्णिमा के दिन स्थानीय स्वयंभू नाथ बौद्ध मंदिर में लाख से अधिक हिन्दू तथा बौद्ध धर्मावलम्बियों ने भगवान् बुद्ध की प्रतिमा का दर्शन किया।

उक्त बौद्ध मठ के निकट आनन्द कुटी नामक बौद्ध-शिक्षा संस्थान के तत्वावधान में जयन्ती के अवसर पर एक समारोह का आयोजन किया गया था, जिसमें नेपाल के परराष्ट्र तथा प्रासाद कार्यमन्त्री डा० तुलसी गिरी तथा विदेशी दूतावासों के अनेक सदस्यों ने भी भाग लिया।

नेपाल के सहायक शिक्षा मन्त्री श्री भुवन लाल प्रधान ने कहा कि मानवता यदि भगवान् बुद्ध के उपदेशों का अनुकरण करे तो विश्वयुद्ध की सम्भावना सदा के लिए टल जाये।

उन्होंने कहा कि प्रत्येक नेपाली को इस बात का गर्व होना चाहिये कि भगवान् बुद्ध नेपाल की मिट्टी में पैदा हुये, जिन्होंने मानवता को सच्ची राह बताई। उनके उपदेश मानवता के लिए प्रकाश-स्तम्भ का काम करेगा। साथ ही युग-युग संसार में शतक मैत्री तथा सहिष्णुता का संदेश देगा।

भिक्षु अमृतानन्द समारोह के अध्यक्ष थे।

विक्रमशिला की खोदाई में बौद्ध मूर्तियाँ प्राप्त—

भागलपुर के जिलाधिकारी ने अपनी मासिक प्रेस कानफरेन्स में बताया कि जिले के आंटीचक गाँव के निकट जो खोदाई हुई है, उसमें कुछ बौद्धकालीन स्तूप तथा प्राचीन काल की ईंटे पायी गयी हैं, जो आठवीं शताब्दी की बतायी जाती हैं।

यह खोदाई उस स्थान पर हो रही है, जहाँ प्राचीन विक्रमशिला विश्वविद्यालय के होने का अनुमान है।

ये स्तूप धरोहर के टीले के नीचे पाये गये हैं। यह खोदाई जून के मध्यतक चलेगी और बरसात के बाद पुनः चालू होगी।

उन्होंने बताया कि पथराघाट से आँटी चकतक सभी टीलों की खोदाई होगी। प्राप्त पुरातत्व सामग्रियों से उक्त क्षेत्र में विक्रमशिला विश्वविद्यालय के होने का अनुमान पुष्ट होता जा रहा है।

सौराष्ट्र में सदियों पुरानी भगवान् बुद्ध की कांस्य मूर्ति—सौराष्ट्र के अमरेली जिले के अन्तरिया गाँव में एक शिवमन्दिर के समीप खोदाई करने पर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भगवान् बुद्ध की १८ इञ्च लम्बी कांस्य मूर्ति उपलब्ध हुई है। पुरातत्व विभाग ने इसपर अनुसन्धान के लिए इसे अमरेली के संग्रहालय में भेज दिया है। विशेषज्ञों की राय में यह मूर्ति अनेक सदियों पुरानी है। इस मूर्ति से ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि सम्भवतः अनेक शताब्दी पूर्व सौराष्ट्र में जैन धर्म की तरह सम्भवतः बौद्ध धर्म का प्रचार भी रहा है।

अन्नपूर्णा शिखर पर बौद्ध ध्वज—अन्नपूर्णा तृतीय शिखर पर ६ मई को धार्मिक विधि के साथ बौद्धधर्म का झण्डा स्थापित किया गया।

शिखर को विजित करनेवाले भारतीय दल के नेता श्री पी० एस० कोहलीने आज यहाँ प्रेस कानफरेन्स में बताया कि शिखर के दूसरे विजेता श्री सोनाम ग्यात्सोने बौद्ध धर्म के ध्वज को अभिमन्त्रित करने के बाद कुछ बौद्ध सूक्तियों का पाठ किया। परा पर्वतारोही दल आज यहाँ वापस आ गया।

बुद्धमूर्ति-प्राप्त—बड़ौदा के एम० एस० विश्वविद्यालय के पुरातत्व विभाग की ओर से उत्तरी गुजरात में कामलनी के समीप जो पुरातत्व सम्बन्धी खोदाइयाँ हाल में की गयी हैं उनमें भगवान् बुद्ध की २० प्रतिमाएँ मिली हैं।

क्षत्रपकाल के ४० सिक्के और १४० फु० ऊँचा एक बुद्ध विहार भी इस खोदाई में निकला है।

भिक्षु संघरत्न लंका रवाना—७ मई को दोपहर में काशी एक्सप्रेस से भिक्षु संघरत्न सारनाथ से लंका के लिए रवाना हुए। आपको विदाई देने स्टेशन पर भिक्षु जगदीश काश्यप, भदन्त शासनश्री महास्थविर तथा भिक्षु धर्मरक्षित उपस्थित थे।

राज्यपाल द्वारा स्वागत—बम्बई में वहाँ के राज्यपाल श्री श्रीप्रकाश ने भिक्षु संघरत्न का लंका जाते समय स्वागत किया। उक्त अवसर पर भिक्षु संघरत्न ने राज्यपाल को एक बुद्धमूर्ति, बोधिपत्र आदि भेंट किया राज्यपाल ने कहा कि सारनाथ में निर्मित होने वाले धर्मपाल-स्तूप के लिए मैं भी सहायता करूँगा।

संघाराम के लिए दान—सारनाथ के संघाराम के एक कक्ष के निर्माण-हेतु लंका की श्रीमती एस० डी सिल्वा ने २०००) का दान भेजा है।

दान—निम्नलिखित व्यक्तियों ने महाबोधि-सभा को अपना उदार दान भेजा है—

कुल्लू (कांगड़ा) की श्रीमती लाजबोध १०) प्रति मास सारनाथ के भिक्षुओं के भोजन के लिए दान भेजा करती हैं। उन्होंने बुद्ध जयन्ती के अवसर पर २५) भेजा है।

बिजली का पंखा खरीदने के लिए डा० सी० एल० धमान, सिंचाई अनुसन्धान प्रतिष्ठान, अमृतसर ने १८८) ४६ न० पै० भेजा है।

मूलगन्ध कुटी विहार के लिए एक बिजली का पंखा खरीदने के लिए मेजर के० एल० छिब्बर स्टेशन वर्कशाप जालन्धर कैण्ट ने १९५) भेजा है।

कानपुर के डा० डी० पी० सिंह की धर्मपत्नी श्रीमती कमलेश ने धर्मदूत के लिए २) दान भेजा है।

कृतज्ञता-प्रकाश—'धर्मदूत' के मुख्य-पृष्ठ की आकृति सुश्री विद्यावती 'मालविका' की बनाई हुई है और उन्होंने सदा की भाँति दान स्वरूप इसे 'धर्मदूत' को प्रदान किया है। हम इस उदार दान के लिए उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री मध्य-भारत हिन्दी-साहित्य समिति इन्दौर

की

मासिक मुख-पत्रिका

वार्षिक मूल्य ५)] **वीणा** [एक संख्या ५० न० पै०

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, मध्यप्रदेश, संयुक्त राजस्थान, बिहार, उत्तर प्रदेश और बड़ौदा की शिक्षा-संस्थाओं के लिए स्वीकृत।

जो पिछले ३४ वर्षों से नियमित रूप से प्रकाशित होकर हिन्दी साहित्य की अपूर्व सेवा कर रही है। भारत के प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में इसका उच्च स्थान है।

साहित्य के विभिन्न अंगों पर तथ्यपूर्ण एवं गम्भीर प्रकाश डालनेवाले लेख तथा परीक्षोपयोगी विषयों पर आलोचनात्मक समीक्षाएँ प्रकाशित करना इसकी प्रमुख विशेषता है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा, मध्यमा एवं उत्तमा (रत्न) तथा बी० ए० और एम० ए० के छात्रों के लिए इसके निबन्ध अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

"वीणा" का भारत में सर्वत्र प्रचार है!

ज्ञान-वृद्धि के लिए वीणा अनुपम साधन है।

भारतीय साहित्य संस्कृति इतिहास और ज्योतिर्विज्ञान की

एकमात्र अद्वितीय त्रैमासिक पत्रिका

वार्षिक मूल्य ५.५०] **'ज्योतिष्मती'** [एक प्रति का १.७५

संचालक और सम्पादक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिषाचार्य

भारत की यही एकमात्र ऐसी पत्रिका है जिसके प्रत्येक अंक में ज्योतिर्विज्ञान के रहस्यों को प्रकट करने-वाले गम्भीर लेख रहते हैं, साथ ही संसार की राजनैतिक सामाजिक स्थिति पर विवेचनात्मक भविष्यवाणी, ग्रहों के योग-दृष्टि आदिका फल, राशिफल, हर्शल नेपच्यून प्लूटो का फ़ल और सरल भाषामें ज्योतिष का प्रारम्भिक ज्ञान सम्बन्धी लेख भी रहते हैं जिनसे पाठक घर बैठे ज्योतिष के अच्छे जानकार हो जाते हैं।

व्यापारियों केलिए—यदि आप किसी प्रकार का व्यापार करते हैं तो इस पत्रिका की सहायता से कई गुना लाभ उठा सकते हैं। इसमें तेजी-मन्दी के विख्यात विद्वानों के अचूक लम्बे चांस और साप्ताहिक तथा दैनिक रुख भी प्रत्येक वस्तु की रहती है। हजारों व्यापारी लाभ उठा रहे हैं, आप भी आज ही मँगाइए।

ज्योतिष आयुर्वेद और मन्त्र शास्त्र के गूढ़ रहस्य कलापूर्ण कहानी और पर्व व्रत त्यौहारों के वैज्ञानिक स्वरूप पर प्रकाश डालने वाले लेख तथा अप्राप्य ग्रन्थों एवं साधनारत अनुभवी विशेषज्ञ प्राचीन अर्वाचीन विद्वानों के परिचय भी 'ज्योतिष्मती' में रहते हैं। वार्षिक मूल्य पाँच रुपये पचास नये पैसे मनीआर्डर से भेजें। बी० पी० नहीं होगी। नमूने की प्रति एक रुपया प्राप्त होने पर ही भेजी जा सकेगी।

पता—व्यवस्थापक, ज्योतिष्मती-निकेतन, सोलन (शिमला)।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भगवान् बुद्ध की १८ इञ्च लम्बी कांस्य मूर्ति उपलब्ध हुई है। पुरातत्व विभाग ने इसपर अनुसन्धान के लिए इसे अमरेली के संग्रहालय में भेज दिया है। विशेषज्ञों की राय में यह मूर्ति अनेक सदियों पुरानी है। इस मूर्ति से ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि सम्भवतः अनेक शताब्दी पूर्व सौराष्ट्र में जैन धर्म की तरह सम्भवतः बौद्ध धर्म का प्रचार भी रहा है।

अन्नपूर्णा शिखर पर बौद्ध ध्वज—अन्नपूर्णा तृतीय शिखर पर ६ मई को धार्मिक विधि के साथ बौद्धधर्म का झण्डा स्थापित किया गया।

शिखर को विजित करनेवाले भारतीय दल के नेता श्री पी० एस० कोहलीने आज यहाँ प्रेस कानफरेन्स में बताया कि शिखर के दूसरे विजेता श्री सोनाम ग्यात्सोने बौद्ध धर्म के ध्वज को अभिमन्त्रित करने के वाद कुछ बौद्ध सूक्तियों का पाठ किया। परा पर्वतारोही दल आज यहाँ वापस आ गया।

बुद्धमूर्ति-प्राप्त—बड़ौदा के एम० एस० विश्व-विद्यालय के पुरातत्व विभाग की ओर से उत्तरी गुजरात में कामलनी के समीप जो पुरातत्व सम्बन्धी खोदाइयाँ हाल में की गयी हैं उनमें भगवान् बुद्ध की २० प्रतिमाएँ मिली हैं।

क्षत्रपकाल के ४० सिक्के और १४० फु० ऊँचा एक बुद्ध विहार भी इस खोदाई में निकला है।

भिक्षु संघरत्न लंका रवाना—७ मई को दोपहर में काशी एक्सप्रेस से भिक्षु संघरत्न सारनाथ से लंका के लिए रवाना हुए। आपको विदाई देने स्टेशन पर भिक्षु जगदीश काश्यप, भदन्त शासनश्री महास्थविर तथा भिक्षु धर्मरक्षित उपस्थित थे।

राज्यपाल द्वारा स्वागत—बम्बई में वहाँ के राज्य-पाल श्री श्रीप्रकाश ने भिक्षु संघरत्न का लंका जाते समय स्वागत किया। उक्त अवसर पर भिक्षु संघरत्न ने राज्यपाल को एक बुद्धमूर्ति, बोधिपत्र आदि भेंट किया राज्यपाल ने कहा कि सारनाथ में निर्मित होने वाले धर्मपाल-स्तूप के लिए मैं भी सहायता करूँगा।

संघाराम के लिए दान—सारनाथ के संघाराम के एक कक्ष के निर्माण-हेतु लंका की श्रीमती एस० डी सिल्वा ने २०००) का दान भेजा है।

दान—निम्नलिखित व्यक्तियों ने महाबोधि-सभा को अपना उदार दान भेजा है—

कुल्लू (कांगड़ा) की श्रीमती लाजबोध १०) प्रति मास सारनाथ के भिक्षुओं के भोजन के लिए दान भेजा करती हैं। उन्होंने बुद्ध जयन्ती के अवसर पर २५) भेजा है।

बिजली का पंखा खरीदने के लिए डा० सी० एल० धमान, सिंचाई अनुसन्धान प्रतिष्ठान, अमृतसर ने १८८) ४६ न० पै० भेजा है।

मूलगन्ध कुटी विहार के लिए एक बिजली का पंखा खरीदने के लिए मेजर के० एल० छिब्बर स्टेशन बर्कशाप जालन्धर कैण्ट ने १९५) भेजा है।

कानपुर के डा० डी० पी० सिंह की धर्मपत्नी श्रीमती कमलेश ने धर्मदूत के लिए २) दान भेजा है।

कृतज्ञता-प्रकाश—'धर्मदूत' के मुख्य-पृष्ठ की आकृति सुश्री विद्यावती 'मालविका' की बनाई हुई है और उन्होंने सदा की भाँति दान स्वरूप इसे 'धर्मदूत' को प्रदान किया है। हम इस उदार दान के लिए उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री मध्य-भारत हिन्दी-साहित्य समिति इन्दौर

की

मासिक मुख-पत्रिका

वार्षिक मूल्य ५)   **] वीणा [**   एक संख्या ५० न० पै०

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, मध्यप्रदेश, संयुक्त राजस्थान, बिहार, उत्तर प्रदेश और बड़ौदा की शिक्षा-संस्थाओं के लिए स्वीकृत।

जो पिछले ३४ वर्षों से नियमित रूप से प्रकाशित होकर हिन्दी साहित्य की अपूर्व सेवा कर रही है। भारत के प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में इसका उच्च स्थान है।

साहित्य के विभिन्न अंगों पर तथ्यपूर्ण एवं गम्भीर प्रकाश डालनेवाले लेख तथा परीक्षोपयोगी विषयों पर आलोचनात्मक समीक्षाएँ प्रकाशित करना इसकी प्रमुख विशेषता है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा, मध्यमा एवं उत्तमा (रत्न) तथा बी० ए० और एम० ए० के छात्रों के लिए इसके निबन्ध अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

"वीणा" का भारत में सर्वत्र प्रचार है!

ज्ञान-वृद्धि के लिए वीणा अनुपम साधन है।

भारतीय साहित्य संस्कृति इतिहास और ज्योतिर्विज्ञान की

एकमात्र अद्वितीय त्रैमासिक पत्रिका

वार्षिक मूल्य ५.५०   **] 'ज्योतिष्मती' [**   एक प्रति का १.७५

संचालक और सम्पादक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिषाचार्य

भारत की यही एकमात्र ऐसी पत्रिका है जिसके प्रत्येक अंक में ज्योतिर्विज्ञान के रहस्यों को प्रकट करने-वाले गम्भीर लेख रहते हैं, साथ ही संसार की राजनैतिक सामाजिक स्थिति पर विवेचनात्मक भविष्यवाणी, ग्रहों के योग-दृष्टि आदिका फल, राशिफल, हर्शल नेपच्यून प्लूटो का फ़ल और सरल भाषामें ज्योतिष का प्रारम्भिक ज्ञान सम्बन्धी लेख भी रहते हैं जिनसे पाठक घर बैठे ज्योतिष के अच्छे जानकार हो जाते हैं।

व्यापारियों केलिए—यदि आप किसी प्रकार का व्यापार करते हैं तो इस पत्रिका की सहायता से कई गुना लाभ उठा सकते हैं। इसमें तेजी-मन्दी के विख्यात विद्वानों के अचूक लम्बे चांस और साप्ताहिक तथा दैनिक रुख भी प्रत्येक वस्तु की रहती है। हजारों व्यापारी लाभ उठा रहे हैं, आप भी आज ही मँगाइए।

ज्योतिष आयुर्वेद और मन्त्र शास्त्र के गूढ़ रहस्य कलापूर्ण कहानी और पर्व व्रत त्यौहारों के वैज्ञानिक स्वरूप पर प्रकाश डालने वाले लेख तथा अप्राप्य ग्रन्थों एवं साधनारत अनुभवी विशेषज्ञ प्राचीन अर्वाचीन विद्वानों के परिचय भी 'ज्योतिष्मती' में रहते हैं। वार्षिक मूल्य पाँच रुपये पचास नये पैसे मनीआर्डर से भेजें। बी० पी० नहीं होगी। नमूने की प्रति एक रुपया प्राप्त होने पर ही भेजी जा सकेगी।

पता—व्यवस्थापक, ज्योतिष्मती-निकेतन, सोलन (शिमला)।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मानव-समाजके सर्वोदयके लिए प्रयत्नशील
अ० भा० श्रीगुरुदेव-सेवामण्डलका
मुखपत्र

श्रीगुरुदेव मासिक

—जो राष्ट्रसन्त श्री तुकडोजी महाराजके संचालकत्व में हर महीने को दो तारीख को नियमित रूप से प्रकाशित होता है।

भारतके श्रेष्ठ विचारकों के महत्त्वपूर्ण लेख, सुरुचिपूर्ण कथासाहित्य एवं काव्य, सेवामण्डल की विविध प्रवृत्तियों की परिचायक तथा जीवन में सबके लिए नितान्त उपादेय सामग्री आदि से परिपूर्ण यह मासिक-पत्रिका, हर परिवार में एक अमूल्य मार्ग-दर्शक मित्र का काम देती है। **हिन्दी-मराठी विभाग युक्त अंक का वार्षिक मूल्य—५ रु० है और केवल हिन्दी विभाग का सिर्फ ३ रु०।** गाँव-गाँव में पहुँचने वाले इस मासिक में विज्ञापन देना देना मानो अपने पैसों से पूरा लाभ उठाना ही है आज ही लिखिये।

पता—प्रमुख, श्रीगुरुदेव प्रकाशन-कार्यालय
गुरुकुंज-मोझरी; जि० अमरावती (महाराष्ट्र)

संस्कृति के प्रेमियों को एक अनुपम भेंट

भारतवर्ष में राजस्थान का इतिहास सदा से राजनीतिक साहित्यिक, सांस्कृतिक और साभाजिक आदि दृष्टियों से अपने-आप में सम्पूर्ण रहा है, यदि आप राजस्थान को इन सभी विशेषताओं अध्ययन करना चाहते हैं तो पढ़ें—

शोध पत्रिका

(साहित्य संस्थान, राजस्थान, विद्यापीठ का प्रमुख त्रैमासिक प्रकाशन)

क्योंकि—

यह पत्रिका प्राचीन राजस्थानी साहित्य, लोक साहित्य, भाषा शास्त्र, इतिहास, पुरातत्व, वनस्पति शास्त्र, ज्योतिष, चित्रकला आदि विभिन्न विषयों पर शोधपूर्ण सामग्री प्रस्तुत करती रही है।

अनवरत १२ वर्षों की सेवा पुरानी फाइलें भी प्राप्य,
चन्दा वार्षिक १० रुपया, प्रति अंक ढाई रुपया,
आज ही ग्राहक बनने के लिए लिखें—

अध्यक्ष साहित्य संस्थान, राजस्थान
विद्यापीठ, उदयपुर

चाणक्य-सूत्राणि

पृष्ठसंख्या ६९०] [मूल्य १२) डा. व्य. २)

आर्य चाणक्य के ५७१ सूत्रों का हिन्दी भाषा में सरल अर्थ और विस्तृत तथा सुबोध विवरण। भाषान्तरकार तथा व्याख्याकार स्व. श्री रामावतारजी विद्याभास्कर, रतनगढ़ (जि. बिजनौर)। भारतीय आर्य राजनैतिक साहित्य में यह ग्रन्थ प्रथम स्थान में वर्णन करने योग्य है है यह सब जानते हैं। व्याख्याकार भी हिन्दी जगत् में सुप्रसिद्ध हैं। भारत राष्ट्र अब स्वतन्त्र है। इस भारत की स्वतन्त्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्र का बल बढ़े और भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रों में सन्मान का स्थान प्राप्त करे, इसकी सिद्धता करने के लिए इस भारतीय राजनैतिक ग्रन्थ का पठन-पाठन भारतभर में और घर-घर में सर्वत्र होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिये इसको आज ही मँगवाइये।

प्राप्तिस्थान—

श्री मन्त्री—स्वाध्याय-मण्डल
पोस्ट—'स्वाध्याय-मण्डल (पारडी)' पारडी
(जि. सूरत)

सामाजिक मासिक

अ ग्र गा मी

सातवें वर्ष में प्रकाशित हो रहा है

सम्पादक
प्रो० नाथूलाल गर्ग
विश्वेश्वरनाथ गुप्त

प्रकाशक
अग्रवाल समाज समिति

एक प्रति २५ न० पै० वार्षिक रु० ३·००

आज ही ग्राहक बनें

अग्रगामी मासिक
जौहरी बाजार, जयपुर
(राजस्थान)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बुद्धघोषकृत बौद्धयोग का उत्कृष्ट ग्रन्थ

विशुद्धि मार्ग

भिक्षु धर्मरक्षित
द्वारा हिन्दी में अनूदित
राज्य सरकार द्वारा पुरस्कृत

'विशुद्धि मार्ग' पालि-साहित्य का एक अमूल्य ग्रन्थ-रत्न है। इसमें बौद्ध-दर्शन की विवेचनात्मक गवेषणा के साथ योगाभ्यास की प्रारम्भिक अवस्था से लेकर सिद्धि तक की सारी विधियाँ सुन्दर ढंग से समझाई गई हैं। इस ग्रन्थ में बौद्धधर्म का कोई भी ऐसा अंग नहीं है जो अछूता हो। एक प्रकार से इसे बौद्धधर्म का विश्वकोश कहा जा सकता है। यद्यपि विशुद्धिमार्ग प्रधानतः योग-ग्रंथ है, तथापि बौद्ध-धर्म का जैसा सुन्दर निरूपण इसमें किया गया है, वैसा अन्य किसी भी ग्रन्थ में प्राप्त नहीं है। योगियों के लिए तो यह गुरु के समान निर्देश करने वाला महोपकारी ग्रंथ है।

यह दो भागों में मुद्रित हो गया है। पहले भाग में समाधि-निर्देश पर्यन्त ११ परिच्छेद हैं और दूसरे में शेष। पहला भाग ४३० पृष्ठों का है और दूसरा ३५०। दोनों के मूल्य क्रमशः १०) और ८) हैं। ग्रन्थ का आकार रायल है।

प्राप्तिस्थान :—

व्यवस्थापक, महाबोधि पुस्तक भण्डार,
सारनाथ, वाराणसी।

'धर्मदूत' ही क्यों पढ़ें ?

क्योंकि—

यह भारत के बौद्धों का अपना मुख-पत्र है। इसमें मराठी और हिन्दी दोनों भाषाओं में विद्वानों के बौद्धधर्म सम्बन्धी लेख प्रकाशित होते हैं। संसार के बौद्ध-समाचार एवं प्रवृत्तियों का संकलन इसी में मिलता है। बौद्ध संस्कृति, इतिहास, दर्शन, कला, पुरातत्व आदि का यह एक प्रतिनिधि-पत्र है। परिशुद्ध बौद्धधर्म के प्रचार का यह एक अनुपम माध्यम भी है। भारत एवं बाह्य बौद्ध देशों में भी इसका आदर है।

महाराष्ट्र में एजेण्टों की आवश्यकता है। विशेष जानकारी के लिए लिखें—

व्यवस्थापक—'धर्मदूत' सारनाथ, वाराणसी।

'धर्मदूत' की एजेंसी के नियम

१—एजेंटों को ।।) प्रति कापी के हिसाब से जितनी प्रतियाँ मँगाना चाहें, जमानत का रुपया भेजना होगा।

२—एजेंटों को कम से कम १० प्रतियाँ मँगाने पर २५% कमीशन मिलेगा और १० प्रतियों से कम मँगाने पर १२।।% कमीशन दिया जायगा।

३—एजेंटों को हर महीने बिक्री का बिल कमीशन काटकर भेजना आवश्यक होगा।

४—बिक्री के बिल का मूल्य माह के अन्तिम सप्ताह तक कार्यालय में पहुँच जाना चाहिए।

५—एजेंटों को उतनी ही प्रतियाँ प्रति माह मँगानी चाहिए जितनी प्रति माह बिक्री कर सकें। न बिकी हुई प्रतियाँ एजेंटों से वापस नहीं ली जायँगी।

व्यवस्थापक—

"धर्मदूत", धर्मपाल रोड, सारनाथ, वाराणसी।
(उत्तर प्रदेश)

सफेद दाग
भारत सरकार से रजिस्टर्ड की परीक्षित दवा का मूल्य ५) रुपये। विवरण मुफ्त मँगा कर देखिये।

पता—वैद्य के० आर० बोरकर, (१०)
मु० पो० मंगरूलपीर, जि० अकोला (महाराष्ट्र)

सफेद दाग

सतत परिश्रम एवं खोज के बाद सफेद दाग की औषधि का निर्माण किया गया है। हजारों ने इसका अनुभव करके लाभ उठाया है। दवा का मूल्य ६) रुपया। विशेष जानकारी के लिए विवरणपत्र मुफ्त मँगाकर देखें। नक्कालों से सावधान रहें।

वैद्य बी० आर० बोरकर, आयुर्वेद भवन (ध०दू०)
मु० पो० मंगरूलपीर, जि० अकोला (विदर्भ)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हिन्दी में बौद्धधर्म की पुस्तकें

विशुद्धिमार्ग (पहला भाग) भिक्षु धर्मरक्षित	१०·००
विशुद्धिमार्ग (दूसरा भाग) ,,	८·००
दीघनिकाय—राहुल सांकृत्यायन	८·००
मज्झिम निकाय— ,,	१०·००
विनय पिटक ,,	१०·००
संयुत्त निकाय—भिक्षु ज० काश्यप और भिक्षु धर्मरक्षित प्रथम भाग ७·००, द्वितीय भाग	६·००
अंगुत्तर निकाय(१भाग)-भिक्षु आ०कौसल्यायन	७·००
बोधिचर्यावतार—शान्तिभिक्षु	१०.००
धम्मपद (कथाओंके साथ)—भिक्षु धर्मरक्षित	२·५०
धम्मपद (मराठी)— ,,	१·५०
धम्मपद—(पुस्तकाकार) ,,	१·५०
धम्मपद—(केवल हिन्दी) ,,	·५०
तथागत-हृदय ,,	·७५
पालि व्याकरण ,,	२·२५
प्रथम बुद्ध-सन्देश ,,	·५०
बौद्धधर्म के मूल सिद्धान्त— ,,	·७५
सुत्तनिपात—भिक्षु धर्मरत्न	४·५०
खुद्दकपाठ—भिक्षु धर्मरत्न	·३१
उदान—भिक्षु जगदीश काश्यप	१·२५
थेर गाथा—भिक्षु धर्मरत्न	३·००
भगवान् बुद्ध की शिक्षा—देवमित्त धर्मपाल	·३१
बुद्ध-जीवनी—वेदराज प्रसाद	·७५
बुद्धचर्या—राहुल सांकृत्यायन	८·००
बुद्ध की देन—भदन्त शासनश्री महास्थविर	२·००
बुद्ध और उनके अनुचर— ,,	१·७५
भगवान् गौतम बुद्ध—बोधानन्द महास्थविर	१·५०
ओम् मणि पद्मे हुँ—धर्मरक्षित और लोवजंग	·७५
बौद्ध कहानियाँ—व्यथित हृदय	१·५०
सारनाथ-वाराणसी—भिक्षु धर्मरक्षित	१·३७
इतिवुत्तक—भिक्षु धर्मरक्षित	·७५
बौद्धयोगी के पत्र—भिक्षु धर्मरक्षित	१·००
भगवान् हमारे गौतम बुद्ध—प्रो० मनोरंजन प्रसाद	·०६
कपिलवस्तु-लुम्बिनी-दिग्द०—श्रीविजय श्रीवास्तव	·५०
बौद्ध-चिन्तन—(कविता) सन्त श्यामाचरणसिंह	·२५
बौद्ध-चर्या-विधि—भिक्षु धर्मरक्षित	·३७
थेरी गाथायें—भरतसिंह उपाध्याय	१·५०
बुद्ध और बौद्ध साधक— ,,	१·५०
धम्मपद—राहुल सांकृत्यायन	१·५०
बुद्धधर्म के उपदेश—भिक्षु धर्मरक्षित	२·००
बौद्ध विभूतियाँ— ,,	१·५०
लंका यात्रा— ,,	१·५०
नेपाल-यात्रा— ,,	४·५०
कुशीनगर का इतिहास ,,	२·५०
पालि-पाठ-माला— ,,	१·००
जातिभेद और बुद्ध— ,,	·७५
तेलकटाह गाथा— ,,	·३७
महापरिनिब्बान सुत्तं— ,,	३·५०
बौद्ध-शिशु-बोध— ,,	·२५
कुशीनगर-दिग्दर्शन— ,,	·२५
तथागत का प्रथम उपदेश— ,,	·२५
सारनाथ-दिग्दर्शन— ,,	·३७
बुद्धकालीन भारत का भौगोलिक परिचय	·५०
पालि जातकावली—बटुकनाथ शर्मा	२·७५
बुद्ध-वचन—भिक्षु आनन्द कौसल्यायन	·७५
नालन्दा का इतिहास—श्री चन्द्रिका सिंह	·६२
बुद्धवचनामृत—भिक्षु शासनश्री	१·२५
बौद्ध-कलाकृतियाँ—विद्यावती 'मालविका'	३·००
श्रद्धा के फूल—(कहानी-संग्रह) ,,	·३७
बुद्ध-अर्चना—(कविता) ,,	·१९
पूर्णिमा—(कविता) ,,	·६२
कामना—(कविता) ,,	·३७
आदर्श बौद्ध महिलायें (पुरस्कृत) ,,	१·५०
नारी-हृदय (कहानी) ,,	१·५०
बुद्ध-चरितावली—(सचित्र) ,,	·७५
महामानव बुद्ध—राहुल सांकृत्यायन	२·५०
बौद्धधर्म ही मानवधर्म—डॉ० अम्बेडकर	१·००

नागरी लिपि में पालि ग्रन्थ

जातकट्ठकथा—भिक्षु धर्मरक्षित	९·००
विसुद्धिमग्गदीपिका—धर्मानन्द-कोशाम्बी	३·५०
पालि पाठ माला—भिक्षु धर्मरक्षित	१·००
चरिया-पिटक— ,,	१·२५
महापरिनिब्बान सुत्तं— ,,	३·५०
महावंसो—भिक्षु धर्मरक्षित	·७५
धम्मचक्कप्पवत्तन सुत्त— ,,	·२५
तेलकटाहगाथा— ,,	·२५
सुत्तनिपात—भिक्षु धर्मरत्न	४·५०
खुद्दकपाठ— ,,	·३१
सिङ्गाल सुत्तं—भिक्षु कित्तिमा	·५०

सूचीपत्र के लिए १२ नये पैसे के टिकट के साथ लिखें।

प्राप्ति-स्थानः—महाबोधि पुस्तक-भण्डार, सारनाथ, वाराणसी।

प्रकाशक—भिक्षु एम० संघरत्न, महाबोधि सभा, सारनाथ, वाराणसी (बनारस)
मुद्रक—ओमप्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, कबीरचौरा, वाराणसी (बनारस) ५८५२-१८

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu